



वर्ष १

रविवार २३ मई १९७६ : २३ ज्येष्ठ २०३३

अंक १४



सम्पादक

पंडिता राकेश रानी

सह-सम्पादक

कु० आभा

दूरभाष : ५६६६३६

: २०१५८४

पता : वेद मंदिर

१५६७, हरद्वानसिंह मार्ग

[निकट ३१, नाईवाला]

करोल बाग, नई दिल्ली-११०००५

मूल्य एक प्रति ५० पैसे

वार्षिक मूल्य २०)

विदेश में ६ पाँड (हवाई डाक से)

४ पाँड : (समुद्री डाक से)

आजीवन ३०१ रु०

## मैं तुम्हें प्यार करता हूँ

सचमुच, मेरा दोष केवल यही है कि मैं तुम्हें प्यार करता हूँ। प्राण की गहराइयों में, सांसों की घड़कन में, नींद में, जागरण में, स्वप्न में, चिन्तन में, मैंने तुम्हें प्यार किया है, केवल तुम्हें—

जीवन के सारे सुखद क्षण तुम्हें ही श्रद्धा से अर्पित कर, सदा तुम्हें ही सजाने का प्रयत्न किया है। अपने को मिटा कर भी तुम्हें उठाने का यत्न किया है। बहुत सोचा है, पर एक क्षण भी तो अपने जीवन का ऐसा स्मरण नहीं, जब मैंने तुम्हें भुलाया हो।

और आज अपने जीवन के अंतिम चरण में भी मैं.....जब अपने को टटोलता हूँ, तो देखता हूँ कि आज भी मेरे पास तुम्हारे प्यार की पूंजी के अतिरिक्त और कुछ भी तो नहीं है।

तुम ने मेरे साथ कुछ भी किया हो, पर मैंने कभी तुम्हारे निष्ठुर व्यवहार से रुष्ट होकर तुम्हें नहीं भुलाया, अपितु अपने प्यार में कमी मन कर और भी अधिक श्रद्धा से तुम्हारे गीत गाए हैं।

मुझे नहीं ज्ञात कि मेरा प्यार कब श्रद्धा बन गया, कब आराधना का रूप धारण कर मैं केवल तुम्हारा ही हो गया। पर जैसे दीपक की लौ पर जलने वाले परवाने यह नहीं जानते कि वे क्यों जल रहे हैं। इसी तरह मैंने सभी कुछ विस्मृत कर तुम्हारी ज्योति पर अपना सब कुछ अर्पित किया है।

एक अबोध शिशु जैसे माँ के अतिरिक्त और कुछ जानता ही नहीं वैसे ही मैंने भी तुम्हारे सिवा और किसी को जाना नहीं, किसी का दामन पकड़ा नहीं। एक ही तमन्ना सदा रही कि जैसे भी हो तुम्हारे उपासक बूढ़े और मेरे जैसे लाखों—करोड़ों भक्त तुम्हारे चरणों में अपना जीवन अर्पित कर दें।

मेरे सर्वस्व ! तुम्हारा निर्माण युग की उस महान विभूति ने किया था, जिसकी उपमा नहीं अनुपम .... अजेय, देव पुरुष की महान् कृति हो तुम.....

तुम माँ हो, शक्ति हो, विश्व क्रांति की सर्जक हो, तुम ने युग को बनाया है और भविष्य को बनाने का भार भी तुम पर ही तो है .....

इस लिए मेरे जैसे अनेक भक्तों ने अपने लहू से तुम्हारा मस्तक सजाया था। तुम शक्ति पाकर भारत को नया रूप देने में समर्थ हो, इसी लिए मेरा प्यार..... साधना बन गया और बिना परिणाम की इच्छा के अपने मन की पवित्र भावना भक्तियों से तुम्हारा दामन पकड़ा है।

तुम कुछ भी व्यवहार करो, हम तो जीवन की अंतिम सांस तक तुम्हारे ही गीत गाएंगे। तुम्हें सजाएंगे और हमारी चिता की लपटों से भी तुम्हारे प्रति असीम प्यार की सुगन्ध फैलेगी।

कभी-कभी मन कचोटता है कि अपने पास उनका कुछ भी तो नहीं हो पाया कि तुम्हें भेंट देकर तुम्हारे हाथों में विश्व-विजय की शक्ति दे सकता ! पर इतना तो मुझे विश्वास है कि चिरन्तन सत्य और साधना की अग्नि से सजोया अर्घ्य तुम्हें तुम्हारे निर्माता के सपने पूर्ण करने की सामर्थ्य देगा।

हम सब एक हैं

अपनी बात

अनेकता अशान्ति का कारण है। मनुष्य और मनुष्य में किसी भी प्रकार का भेद करना सबसे बड़ा अपराध है। संसार के सभी मनुष्यों की एक जाति है, एक धर्म है, एक ईश्वर है और उनका मार्ग भी एक ही है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थप्रकाश के एकादश समुल्लास की अनुभूमिका में लिखा है कि—

“इसी मतमतान्तर के विवाद से जगत् में जो-जो अनिष्ट फल हुए, होते हैं और होंगे उनको पक्षपात रहित विद्वज्जन जान सकते हैं। जब तक इस मनुष्य जाति में परस्पर मिथ्या मतमतान्तर का विरुद्ध वाद न छूटेगा तब तक अन्योन्य को आनन्द न होगा।

इन शब्दों के प्रकाश में आप विचार करें और देखें कि स्वामी जी ने कितनी दूरदर्शिता का परिचय देते हुए उक्त विचार प्रगट किए हैं।

मतभेद ही सभी विग्रह का कारण है। इनके कारण ही बड़े-बड़े युद्ध हुए हैं और होंगे। घर की अशान्ति लेकर सर्वनाशकारी राष्ट्रों के संग्राम मतभेदों का ही परिणाम हैं।

उन्नति और आनन्द के लिए ऋषि का मार्ग दर्शन इस प्रकार है।

१—मतमतान्तर के विवाद से संसार का अनिष्ट होता है।

२—विद्वान वही है जो यह जानता है कि विवाद मिटने चाहिएं और यह जानकर वह इस विषय में यत्नशील रहता है।

३—जब तक झूठ रहेगा।—मत वाद रहेंगे।

तब तक हमें और कुछ भी प्राप्त हो किन्तु आनन्द प्राप्त नहीं होगा।

इसलिए आज ऋषि दयानन्द के आदेश का पालन करने वाले सभी व्यक्तियों का यह प्रथम कर्तव्य है कि वे पूरी शक्ति से मनुष्य और मनुष्य के मध्य खड़ी सभी भेद-भावों की दीवारों को गिराने में सक्रिय हों।

निर्माण देश का करना हो या विश्व का, पहली शर्त है एकता। विचारों की एकता—किसी कवि ने भी कहा है—

जहाँ सुमति तहें सम्पति नाना,

जहाँ कुमति तहें विपति महाना।

जहाँ एकता नहीं होगी, वहाँ जीवन नहीं रह सकता।

मृत्यु अनेकता का निश्चित परिणाम है।

हम अपना अन्तर टटोलें और विचारें कि हम ऋषि आदेश का अनुसरण कहाँ तक कर रहे हैं? प्यार, स्नेह, सद्भाव और एकता को तिलांजलि देने वालों को क्या अधिकार है कि वे अपने को आर्य कहें! मुकदमों में ही जीवन लगाने वाले क्या किसी भी संगठन के हितैषी हो सकते हैं।

आज अगर हम सब एक झण्डे के नीचे आकर भेद-भाव भुलाकर यह आवाज गुंजाएँ कि “हम सब एक हैं” तो फिर कितनी देर लगेगी देव दयानन्द के दिव्य स्वप्न पूर्ण होने में।

पर हम इसके लिए तैयार हैं? क्या विचार भेद मिटाकर, द्वेष-फूट जलाकर हम एकता का मन्त्र जपेंगे—यदि नहीं तो फिर—

मृत्यु को कौन रोकेगा?

रोहतक पहुंचिए

२८-२९-३० को रोहतक में महामेला हो रहा है। तैयारियाँ हो चुकी हैं। बड़े लम्बे-चौड़े आयोजनों की घोषणाएँ की जा रही हैं।

आज हम यह कहने की स्थिति में नहीं हैं कि इस आयोजन में और दूसरे आयोजनों में क्या मौलिक अन्तर होगा, फिर भी हम यह अवश्य चाहते हैं कि आयोजन निराला हो और भारत के आर्यसमाज को नई दिशा देने में समर्थ हो।

अतः इन पंक्तियों द्वारा देश के सभी प्रबुद्ध नागरिकों से, विशेष रूप से आर्य नर-नारियों से हमारी सानुरोध प्रार्थना है कि वे सारे कार्य छोड़कर भी २८ की प्रातः रोहतक पहुंचें।

प्रभु यह शताब्दी सफल करें आयोजक इसे धर्मोत्सव का रूप दें, राजनैतिक प्रदर्शन का नहीं।

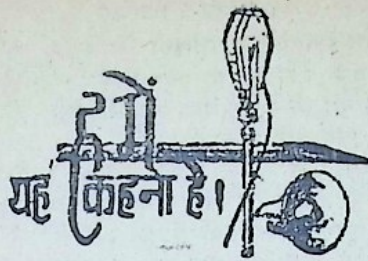
क्या आप सहयोग न देकर काम रोकना चाहेंगे

हमने वेद भाष्य पूरा किया, सस्ता सत्यार्थ प्रकाश निकाला, जीवनी निकाली, लगभग ५० लाख रु. का साहित्य प्रसारित किया, भारी घाटे से।

और परिणाम स्वरूप आज आपका संस्थान आर्थिक संकट से गुजर रहा है और स्थिति विपन्न ऐसी चल रही है कि यदि जनता का सहयोग तुरन्त न मिला तो हमें प्रचार की सारी योजनाएँ बन्द करनी पड़ेंगी।

हमारी प्रार्थना है कि आप तुरन्त अपना सहयोग प्रदान करें और निम्न प्रकार से हाथ बटाएँ।

(जो)



## ग्रामों की ओर

**भारत** ग्रामों में रहता है। भारतीय संस्कृति ग्रामों में पलती है। ग्राम ही हमारे आधार और प्रेरणा स्रोत हैं। नगरों में जहाँ आज भौतिकता का राज्य है वहाँ ग्रामों में अब भी धर्म और अध्यात्म के प्रति अपार श्रद्धा है।

हमारा सब से बड़ा अपराध यह है कि हम ने निरंतर गांवों की उपेक्षा की है। बड़े-बड़े प्रदर्शन और महोत्सवों द्वारा धन संग्रह कर अट्टालिकाओं का निर्माण कर हमने अपने कर्तव्य को पूर्ण मान लिया है, किन्तु भारत के ७ लाख गांवों की ओर हमने ध्यान नहीं दिया है।

बड़ी-बड़ी सभाओं के बिल्कुल समीप के जिलों में १-२ स्थानों को छोड़ कर आर्यसमाज नहीं है। अभी भी ६ लाख ५० हजार ग्रामों तक हमारा—आर्यसमाज का सन्देश नहीं पहुंचा है।

क्या यह साधारण और क्षमा योग्य अपराध है? हम बैठकें करते हैं, चुनावों के लिए, लड़ने के लिए, पर क्या कभी हमने ग्रामों तक पहुंचने के लिए कुछ किया है? क्या भारत की आत्मा तक अपनी बात पहुंचाने का उपाय हमने कभी सोचा है? अब और देरी का समय नहीं। द्वितीय शताब्दी के प्रथम चरण में हम ग्रामों की ओर ध्यान दें, और यत्न करें कि सच्चे भारत को श्रद्धा दयानन्द के अमृत से पवित्र किया जाए। इस सम्बन्ध में हमारे कुछ सुझाव इस प्रकार हैं—

१. प्रत्येक प्रतिनिधि सभा एक प्रचारक वाहन तैयार कराए और उसमें एक योग्य उपदेशक—एक भजनीक, लाउड स्पीकर व साहित्य सहित अपने-अपने प्रदेश में छोड़ दें, जो कम से कम १ दिन में २ ग्रामों में प्रचार करें।

२. प्रत्येक आर्यसमाज अपने क्षेत्र में २ उत्सव करें एक अपने स्थान में, एक समीप के ग्राम में।

३. वानप्रस्थी—संन्यासी ग्रामों में जाकर प्रचार करें। हमारा निश्चित विश्वास है कि ग्रामों की उपेक्षा कर हम भारत को कभी भी वेदानुयायी न बना सकेंगे।

इसलिए दूसरी शताब्दी का हमारा कार्यक्रम ग्राम-प्रचार वने और हमारे देश के विकास के लिए।

हम सच्चे भारत को वैदिक धर्म का संदेश सुनाएं।

वे प्रतीक्षा कर रहे हैं पर क्या हम उनकी उपेक्षा ही करते रहेंगे?

## हमारी मल्लावां, यात्रा

८ मई रात्रि ६.४० पर लखनऊ मेल से हम हरदोयी के लिए चले। ज्योत्स्ना बेटी गाड़ी पर छोड़ने आयी। प्रातः ५॥ के लगभग हम हरदोयी पहुंचे, वहाँ हमें केवल उतरना था और मल्लावां जाना था। पर हमने देखा कि आर्यसमाज हरदोयी के अधिकारी ओ२म् ध्वज लिए स्टेशन पर उपस्थित हैं।

उन्होंने पुष्प मालाओं से हमारा प्लेटफार्म पर ही स्वागत किया, सभी उपस्थित व्यक्तियों ने पुष्प वर्षा की। ऐसा लगा यह स्वागत हमारा नहीं, दयानन्द संस्थान का हो रहा है।

स्नानादि से निवृत्त हुए ही थे कि मल्लावां के आर्य श्रेष्ठी श्री विद्याधर जी अपनी कार लेकर पहुंच गए। उन के साथ प्रिय पं० सच्चिदानन्द जी शास्त्री भी पधारे। शास्त्री जी का हमारा परिचय २१-२२ वर्ष पुराना है। वे सदा बड़ा भाई मान कर आदर देते रहे हैं। हरदोयी में उनका विशाल भवन देखा और फिर कार द्वारा उन के ग्राम सुरसा में गए।

वहाँ जाकर उनके पिता जी के कार्यो और प्रभाव का ज्ञान हुआ। छोटे से ग्राम का कायाकल्प श्री सच्चिदानन्द जी के पिता जी श्री पं० रघुनन्दन शर्मा के प्रयत्नों से हो चुका है। ग्राम में एक दयानन्द उच्चतर महाविद्यालय भी आपने स्थापित किया है। जो अच्छे भवनों में चल रहा है। यह विद्यालय शास्त्री जी के बड़े भाई की स्मृति में है जो हैदराबाद संग्राम में शहीद हो गए थे।

शहादत के जाम का असर ही सच्चिदानन्द शास्त्री को आर्यसमाज के प्रति अर्पित कर चुका है। भरा पूरा सम्पन्न परिवार सम्पत्ति मकान सभी का मोह त्याग कर इस आर्य युवक ने अपनी सुयोग्य पत्नी के देहान्त के पश्चात् जिस तपस्या से सारी जवानी बिता दी, उसकी उपमा आज के युग में कठिन है। वस्तुतः इनके जीवन की पृष्ठ भूमि जानकर हमें गौरव भी हुआ और हर्ष भी!

लगभग ६.३० पर हम मल्लावां पहुंचे। यज्ञ हो रहा था, अतः सीधे यज्ञ वेदी पर ही बैठे। वहाँ आचार्य श्री पं० बिहारीलाल जी शास्त्री, आर्यसमाज के महोप-देशक पं० केशवदेव शास्त्री उपस्थित थे।

एक बिल्हड़ा परिवार मुसलमान से फिर हिन्दू बनने के लिए तत्पर था। विशाल जनसमूह पवित्र यज्ञ की



### दौलानगर में आर्य समाज की स्थापना

—आर्य समाज दौलानगर (तहसील गोहाना) जिला पानीपत में आर्य समाज की स्थापना गत मास की गई। जिसमें निम्नलिखित पदाधिकारी चुने गए।

प्रधान चौधरी रणधीर सिंह आर्य, मन्त्री श्री बलवीर सिंह आर्य, कोषाध्यक्ष श्री राजपाल सिंह एवं उपप्रधान श्री रतन सिंह तथा उपमन्त्री श्री सत्यपाल सिंह तथा श्री रामकुमार सिंह पुस्तकाध्यक्ष।

### वाषिकोत्सव

—आर्य कुमार सभा किर्जवे कैम्प दिल्ली का वाषिकोत्सव 8 मई को स्वामी धर्मानन्द की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। स्वामी जी ने अपने भाषण में नवयुवकों से आर्य समाज में आई कमजोरियों को दूर करने हेतु जुटने का आह्वान किया।

—आर्य समाज ज्ञानमठ का वाषिकोत्सव २२ से २५ मई तक डी. ए. बी. इंटर कालेज के प्रांगण में आयोजित होगा। शोभायात्रा २२ मई को अपराह्न दो बजे पंडाल से ही प्रारम्भ होगी।

### आर्य समाज ओवरा का चुनाव

—आर्य समाज ओवरा के चुनाव में श्री रामचन्द्र प्रसाद प्रधान, श्री नन्द किशोर उपप्रधान, श्री द्वारिका प्रसाद मन्त्री, श्री कपिलदेव उपमन्त्री, श्री शिवदत्त कोषाध्यक्ष, श्री धनराज पुस्तकाध्यक्ष तथा श्री रामयश आर्य व श्री रामराज आर्य प्रचार मन्त्री एवं श्री अमरसिंह आयुष्य निरीक्षक चुने गए।

### (शेष पृष्ठ ४ का)

१—जन-ज्ञान साप्ताहिक के आजीवन सदस्य बनकर।

२—वेद भाष्य के लिए १००१ रु. दान देकर जो अधिक नहीं कर सकते वे थोड़ा-थोड़ा सहयोग अवश्य करें, ताकि बढ़ते कदम रोकने न पड़े—

आपके सहयोग की प्रतीक्षा में—

### भंगड़ा नृत्य

कल हमारे पड़ोस में एक विवाह था, बारात आई, तो कन्या के द्वार पर लगभग आधा घन्टा युवक पागल होकर नृत्य करते रहे! उनकी भाव-भंगिमाओं ने उन्हें मनुष्य से पशु जैसा रूप दे दिया था।

विवाह के पवित्र अवसर पर शराब पी-पीकर नृत्य करना कहाँ तक शोभनीय है, इस पर गम्भीर विचार की आवश्यकता है। शासन जहाँ दहेज आदि कुप्रथाओं को रोकने हेतु उचित आवश्यक पग उठा रहा है वहाँ उसे इन कुप्रथाओं पर भी प्रतिबन्ध लगाना चाहिए।

आर्य समाजों को चाहिए कि वे भंगड़ा, नृत्य जैसे दूषित वातावरण को समाप्त करने के लिए सबल स्वर उठाएँ और आर्य समाजों जैसे विवाह समारोहों का बहिष्कार करें।

(पृष्ठ ५ का शेष)

देखने उमड़ पड़ा। पौराणिकों के गढ़ में श्रद्धा संस्कार पहली बार हो रहा था। सबने सब कुछ देखा। पं० बिहारीलाल जी का मार्मिक उपदेश सभी की आंखों में हर्ष के आंसू लाने में समर्थ हुआ।

यज्ञोपरान्त हमारा उपदेश हुआ। उपस्थिति दिल्ली के बड़े-बड़े उत्सवों से कहीं अधिक थी। अधिकांश व्यक्ति कट्टर सनातन धर्मी पौराणिक ब्राह्मण थे। पर सभी बड़ी श्रद्धा से धार्मिक ज्ञान गंगा में स्नान कर रहे थे।

सत्यार्थ—प्रकाश—ऋषि जीवन और चित्रों पर जनता आदर सहित केन्द्रित थी और सैंकड़ों व्यक्तियों ने इन्हें पढ़ने का निश्चय किया।

इस पिछड़े—अंधविश्वासों से पूर्ण कट्टर कान्य-कुब्ज ब्राह्मणों के गढ़ में वैदिक धर्म का डंका बजवाने का श्रेय सच्चे आर्य श्रेष्ठी श्री विधाघर सराफ को है। आप को प्रभु—ने सब कुछ दिया है और सब से अधिक विशेषता यह कि आप की सभी सतान योग्य धार्मिक और श्रद्धा से पूर्ण हैं।

आप के एक पुत्र एम. बी. बी. एस. करके घर पर ही चिकित्सा करते हैं। रोगियों की भारी भीड़ देखकर किसी बड़े हस्पताल का भ्रम होता है। जिस प्रेम से वे चिकित्सा कर रहे हैं उसे देख गर्व होता है।

रात्री में ८।१० से १।१० तक फिर अपनी बात कह कर वापसी के लिए रवाना हुए। हरदोयी चुंगी के पास आकर कार बिगड़ गयी और रिक्शा से भागते हुए दिल्ली की गाड़ी पकड़ी और अब गाड़ी दिल्ली की सीमा में प्रविष्ट हो चुकी है।

इस यात्रा में हम ने ग्रामों की पुकार-प्यास अनुभव की है। किसी भी संस्था को सुदृढ़ बनना है तो उसे ग्रामों में फैलना होगा। ग्रामों की उपेक्षा जीवन की उपेक्षा है।

अतः सार यह कि आर्यसमाज को अब पूरे बल से ग्राम प्रचार की ओर लगना चाहिए। अपनी गति विधियाँ ग्रामों में केन्द्रित करो, विजय स्वयं आप की चरण बन्दना करेगी। नई दिल्ली स्टेशन आ गया।

अतः विवरण भी समाप्त।

—भारतेन्द्रनाथ

### वेद प्रचार के पवित्र यज्ञ को

सफल बनाइए

राजधानी में विशाल वेद मंदिर

स्थापित कीजिए और

भारत के घर-घर में प्रभु की

अमर वाणी पहुँचा कर धर्म रक्षा

का पुण्य कमाइए

आगे बढ़ने में सहयोग दीजिए

मंत्री दयानन्द संस्थान नई दिल्ली-५

# क्या सांख्य अनीश्वरवादी है ?

—प्रो० रत्नसिंह एम० ए०, अध्यक्ष,  
दर्शन शास्त्र विभाग, महानन्द मिशन कालिज, गाजियाबाद

★★★★

**सां**ख्य शास्त्र के आद्य प्रवर्तक महर्षि कपिल थे। कपिल सांख्य के सम्बन्ध में अनेक शताब्दियों से यह प्रवाद प्रचलित रहा है कि यह शास्त्र निरीश्वरवाद का पोषक है। इस विचार-धारा का आरम्भ बौद्ध काल से हुआ। मध्यकालिक विद्वानों ने अज्ञानवश सांख्य सिद्धांतों के वास्तविक रूप को न समझकर सांख्य के निरीश्वरवाद का खूब प्रचार किया, जिसके परिणामस्वरूप इस भ्रान्त धारणा की जड़ें इतनी गहराई तक जा चुकी हैं कि वर्तमान में अधिकतर भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वान् इसे एक सत्य सिद्धान्त समझ बैठे हैं। कतिपय विद्वानों ने सांख्य तथा बौद्ध-धर्म में एक विन्क्षण साम्य सिद्ध किया है। उनका विचार है कि दोनों ने (१) ईश्वर की सत्ता को आमन्य ठहराया है। (२) पुरुष (जीवात्मा) की अनेकत को स्वीकार किया है। (३) मुक्ति को जीवात्मा का परम लक्ष्य माना है। प्रसिद्ध भारतीय दार्शनिक डॉ० राधाकृष्णन् अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ भारतीय दर्शन द्वितीय खण्ड में “क्या सांख्य नास्तिक है? शीर्षक के अन्तर्गत पृष्ठ ३१६ पर लिखते हैं—

“In its classical form, how ever, the Sankhhyā does not uphold theism. In its indifference to the supremacy of an absolute spirit, as well as in its doctrine of the relation of avidya and the soul's entanglement in samsara, the Sankhhyā reminds us of Buddhism.” अर्थात् अपने शास्त्रीय रूप में सांख्य ईश्वर की सत्ता को स्वीकार नहीं करता। सांख्य शास्त्र में ईश्वर के अधिष्ठातृत्व के प्रति उदासीनता, इसका अविद्या तथा पुरुष का जगत् से सम्बन्ध हमें बौद्धमत का स्मरण करा देता है।”

(१) सांख्याचार्य वार्पगण्य ने सर्ग रचना में ईश्वर की सत्ता को अस्वीकार किया है।

(२) सांख्य ने २५ तत्त्वों में पृथक् से ईश्वर का वर्णन नहीं किया है।

(३) ‘ईश्वरासिद्धेः’ सूत्र में स्पष्टतः ईश्वर की सत्ता को असिद्ध कहा है।

(४) आधुनिक समय के महान् विचारक लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक का विचार है कि सांख्यवादी केवल प्रकृति और पुरुष दो ही तत्त्वों को जगत् का मूल कारण मानते हैं। वे लोग प्रकृति और पुरुष के परे ईश्वर, काल, स्वभाव या अन्य किसी भी मूल तत्त्व को नहीं मानते।

इन आरोपों की हम क्रमशः परीक्षा करते हैं। जैसा कि हम आरम्भ में लिख चुके हैं, सांख्य दर्शन के आद्य प्रणेता मुनि कपिल थे। उनके अनन्तर सांख्य परम्परा में वार्पगण्य नामक आचार्य हुए हैं, जिन्होंने कई विषयों पर कपिल के विचारों से अपना मतभेद प्रस्तुत किया है। उनकी कोई रचना आज उपलब्ध नहीं है परन्तु सांख्य के कतिपय व्याख्या ग्रन्थों में उनके कुछ सन्दर्भ उपलब्ध होते हैं। उनका एक सन्दर्भ निम्न प्रकार है:—

**प्रधानप्रवृत्तिरप्रत्यया पुरुषेणाऽपरि-  
गृह्यमाणा आदिसर्गे वर्तते।**

आदि सर्ग में प्रधान की प्रवृत्ति, अप्रत्यय अर्थात् चेतननिरपेक्ष होती है। प्रधान को अपनी प्रवृत्ति के लिए पुरुष के अनुग्रह की कोई अपेक्षा नहीं रहती। इससे स्पष्ट है कि वार्पगण्य प्रकृति की प्रवृत्ति में चेतन-प्रेरणा की अपेक्षा स्वीकार नहीं करते। यह मान्यता जगद्रचना में ईश्वर के नियन्त्रण को अनावश्यक समझती है। वस्तुतः वार्पगण्य का यह निज का मत है। इसके आधार पर यह कथन उचित नहीं कि कपिल सांख्य अनीश्वरवादी है। वार्पगण्य के इस मत के सर्वथा विपरीत महर्षि कपिल का कथन है कि चेतन अधिष्ठाता के बिना प्रधान में प्रवृत्ति नहीं होती। सृष्टि रचना में ईश्वर की स्वयं के स्वरूप के सम्बन्ध में कपिल का कथन है—

**तत्सन्निधानादधिष्ठातृत्वं मणिवत् ॥ [सां. १।६१]**

अर्थ—प्रकृति के साथ सन्निधान से (ईश्वर में) अधिष्ठातृत्व है, मणि के समान। जिस प्रकार चुम्बक लौह धातु में सान्निध्यमात्र से क्रिया विशेष को उत्पन्न कर देती है, इसी प्रकार चेतन परमात्मा केवल अपने सान्निध्य से समस्त प्रकृति का संचालन करता है। प्रकृति की प्रवृत्ति में यहाँ परमात्मा का अधिष्ठातृत्व रूप स्वीकार किया गया है।

तृतीय अध्याय के सूत्र संख्या ५५ में सूत्रकार ने कहा है कि जगत् चेतन ईश्वर का कार्य-परिणाम नहीं है अर्थात् ईश्वर जगत् का उपादान नहीं है। इस पर भी ईश्वर का जगत् से सम्बन्ध अवश्य है। क्योंकि जगत् परबल है। ईश्वर जगत् का नियन्ता है और जगत् नियम्य है। इसी धारे में सूत्रकार कहता है—

जगत् का रचयिता है ।

इससे अगले सूत्र में सूत्रकार कहता है—

**ईदृशेश्वर सिद्धिः सिद्धा ॥ [३-५७]**

अर्थ—इस प्रकार के ईश्वर की सिद्धि निश्चित है ।

आगे चलकर सूत्र संख्या ५६ में बताया गया है कि अचेतन होने पर भी क्षीर के समान प्रकृति की प्रवृत्ति होती है ।

**अचेतनत्वेपि क्षीरवच्चेष्टितं प्रधानस्य ॥ [३-५६]**

कतिपय व्याख्याकारों ने इस सूत्र से यह आशय निकाला है कि जगद्रचना में ईश्वर की आवश्यकता नहीं है क्योंकि अचेतन प्रकृति में अचेतन क्षीर के समान स्वतः प्रवृत्ति होती है । अर्थात् जिस प्रकार माता के स्तनों में बच्चे के लिए अचेतन दूध स्वतः बहने लगता है, उसी प्रकार अचेतन प्रकृति भी स्वयमेव बिना किसी चेतन के सहयोग के जगदाकार हो जाती है । अपने मत की पुष्टि में ये लोग सांख्यकारिका की ५७वीं आर्या का आश्रय लेते हैं जिसमें कहा है कि जिस प्रकार बछड़े के पोषण के लिए अचेतन दूध माता के स्तनों में स्वतः आ जाता है इसी प्रकार प्रत्येक बद्ध पुरुष को मुक्ति देने के लिए जड़ प्रकृति की प्रवृत्ति भी स्वतः हो जाती है । आर्या इस प्रकार है—

**वत्सविवृद्धिनिमित्तं क्षीरस्य**

**यथा प्रवृत्तिरज्ञस्य ।**

**पुरुषविमोक्षनिमित्तं तथा**

**प्रवृत्तिः प्रधानस्य ॥**

अपने मत के समर्थन में इस प्रकार के व्यक्ति वेदान्त दर्शन के इस सूत्र को भी उद्धृत करते हैं—

**पयोऽम्बुवच्चेत् तत्रापि ॥ [२-२-३]**

जैसे दूध बच्चे के लिए स्वतः स्तनों द्वारा बहने लगता है, तथा जल स्वतः नदी नालों में बहता रहता है, ऐसे जड़ उपादान तत्त्व जीवात्माओं के भोग के लिए स्वतः प्रवृत्त होकर जगत् की रचना करता है ।

इस प्रकार के व्याख्याकारों की आलोचना करते हुए प्रसिद्ध दार्शनिक श्री उदयवीर जी शास्त्री सांख्यदर्शन के विद्योदय भाष्य पृष्ठ १५१ पर लिखते हैं:—

“वस्तुतः उन व्याख्याकारों ने दृष्टान्त के रहस्य की ओर ध्यान नहीं दिया । यदि दूध में चेतन निरपेक्ष प्रवृत्ति हो, तो बच्चे के न होने पर, अन्य बच्चे के आने, बच्चे के होने पर प्रति क्षण तथा माता की निर्जीव अवस्था में भी दूध की प्रवृत्ति रहनी चाहिए । पर यह प्रत्यक्षादि प्रमाणों के विरुद्ध है ।”

बच्चे के पोषण के लिए माता के दूध की प्रवृत्ति में निश्चित रूप से चेतन आत्मा निमित्त है । बहते हुए जल पर भी यही सिद्धान्त लागू होता है । द्रव होने के कारण नीचे की ओर बहना जल का स्वभाव है । ऊँचे नीचे स्थान की, इसी चेतन शक्ति की व्यवस्थाधीन

होती है । यहाँ एक बात और विचारणीय है । यदि यह मान भी लिया जाये कि जड़ प्रकृति में स्वभावतः प्रवृत्ति होती है, तो उसमें निवृत्ति का होना असम्भव होगा क्योंकि किसी पदार्थ का स्वभाव उसका नियत गुण होता है । यह सदैव समान रहने वाला अपरिवर्तन-शील होता है । इसका परिणाम यह होगा कि संसार में सब कार्यरूप वस्तुएँ सदैव बनी रहनी चाहिए, उनका विध्वंस कभी न होने पायेगा । परन्तु संसार में बनना और बिगड़ना दोनों देखने में आते हैं । स्पष्टतः यह सब चेतनाधीन ही है ।

सांख्य दर्शन पञ्चम अध्याय के प्रारम्भ के कई सूत्रों में इस विषय को और अधिक स्पष्ट किया गया है । विस्तार भय से उसका वर्णन सम्भव न हो सकेगा । इस विषय के समर्थन में आचार्य माठर के तर्क को महत्वपूर्ण समझकर हम उसे यहाँ उद्धृत करते हैं—“कोई वस्तु अधिष्ठाता के बिना सम्भव नहीं, लोह में जिस प्रकार रथ, सारथि से अधिष्ठित हुआ प्रवृत्त होता है अनधिष्ठित नहीं । यदि चेतन अधिष्ठाता न रहे, तो शरीर का नाश हो जाय । पण्डितम्ब में कहा है—“पुरुषाधिष्ठितं प्रधानं प्रवर्तते” अर्थात् पुरुष से अधिष्ठित प्रधान प्रवृत्त होता है । इस कारण हम समझते हैं कि वह परमात्मा चेतन है, जिससे अधिष्ठित हुआ प्रधान महत्, अहंकार आदि कार्यों को उत्पन्न करता है, अतः चेतन का अस्तित्व सिद्ध होता है ।”

सांख्य को नास्तिक सिद्ध करने के लिए इस पर जो दूसरा आक्षेप किया है, अब उसका समाधान करते हैं । यह सत्य है कि सांख्य में २४ जड़ [एक मूल प्रकृति और तेईस प्रकृति के विकार] और एक चेतन पुरुष इस प्रकार २५ तत्त्वों का वर्णन किया गया है । इस शास्त्र में ‘पुरुष’ पद चेतन का प्रतीक है । चेतन के दो वर्ग किए गये हैं, एक परमात्मा तथा दूसरा जीवात्मा । इस प्रकार पुरुष पद से अभिप्राय परमात्मा व जीवात्मा दोनों से है । यह कहना सर्वथा अशुद्ध है कि सांख्य दर्शन में ईश्वर का वर्णन नहीं किया गया है । जगत् निर्माण में ईश्वर के अधिष्ठातृत्व का वर्णन ऊपर किया जा चुका है । सांख्य दर्शन में और भी कई सूत्र हैं जो स्पष्टतः ईश्वर के स्वरूप का वर्णन करते हैं । वादी शंका कर सकता है कि सांख्य ने दो मूल-भूत स्वतन्त्र तत्त्व माने हैं—प्रकृति और पुरुष । पुरुष पद से जीवात्मा का ही ग्रहण करना चाहिए । सर्ग रचना में प्रकृति में प्रवृत्ति के लिए पुरुष का सान्निध्य अपेक्षित है, इसका अभिप्राय यह है कि अनन्त जीवात्माओं के सान्निध्य से प्रकृति में प्रवृत्ति होती है । ईश्वर का पुरुष पद से ग्रहण नहीं करना चाहिए और न उसकी जगद्रचना में आवश्यकता है । इस शंका के समाधान में हम इतना ही कहना चाहते हैं कि अनेक जीवात्मा मिलकर प्रकृति का नियन्त्रण नहीं कर सकते । जीवात्मा का स्वरूप अल्पज्ञ व अल्प शक्ति वाला है । सृष्टि की रचना केवल सर्वज्ञ तथा सर्वशक्तिमान् शक्ति से ही सम्भव है । यदि सभी जीव एक स्थान पर मिल भी जायें तो उनकी अल्प शक्ति का योग कभी पूर्ण शक्ति नहीं हो सकता । दूसरी कठिनाई यह है कि प्रवृत्ति-वैविध्य के कारण सब जीवात्मा

स्थिति के पक्ष में रहेगा, तीसरा उसका प्रलय चाहेगा। फलस्वरूप जगत् में समान व्यवस्था का रहना असम्भव हो जायेगा। यह भी विचारणीय है कि स्वरूप की दृष्टि से एक देशी होने के कारण जीवात्मा विना शरीर व इन्द्रियों के साधन के कार्य करने में अशक्त है। सृष्टि रचना से पूर्व उसके पास इन साधनों का अभाव रहता है। अतः ऐसी स्थिति में सृष्टि रचना में नियन्ता एवं प्ररयिता उसे कैसे माना जा सकता है। अतः हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि एक ईश्वर ही समस्त विश्व का नियन्ता है अनेक जीवात्मा नहीं। इसलिए सूत्रकार ने पुरुष पद का जगत् रचना में अधिष्ठाता रूप में जहाँ भी प्रयोग किया है, वहाँ इससे अभिप्राय केवल ईश्वर से है।

सांख्य पर अनोश्वरवादी होने के तीसरे आरोप की समीक्षा अब प्रस्तुत करते हैं। सांख्य दर्शन के प्रथम अध्याय के सूत्र 'ईश्वरासिद्धेः' के आधार पर यह कहा जाता है कि इस दर्शन ने ईश्वर का निषेध किया है। यह बड़ी विचित्र बात है कि जो सूत्रकार आगे चलकर तृतीय अध्याय के ५६वें व ५७वें सूत्रों में ईश्वर पद का स्पष्ट प्रयोग कर ईश्वर को सर्वान्तर्यामी और सम्पूर्ण जगत् का रचयिता स्वीकार करता है, वह व्यक्ति प्रथम अध्याय में उस ईश्वर की सत्ता का निषेध किस प्रकार कर सकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि सांख्य पर नास्तिकता का आरोप लगाने वाले व्याख्याकारों ने सारी समस्या पर गम्भीरता से विचार नहीं किया है, अन्यथा वे ऐसा परिणाम न निकालते। 'ईश्वरासिद्धेः' का अर्थ यह किया जाता है—'ईश्वर असिद्ध है।' इस सूत्र का सही अर्थ समझने के लिए इससे पूर्व के दो सूत्रों का भाव जानना आवश्यक है। ५४वें सूत्र में 'प्रत्यक्ष' प्रमाण का लक्षण किया गया है जो इस प्रकार है—'जिसके साथ सम्बद्ध होता हुआ, उसी आकार को धारण करने वाला अथवा उसी प्रकार उल्लेखन—निर्देशन करने वाला जो विज्ञान है, वह प्रत्यक्ष प्रमाण है।' यहाँ प्रत्यक्ष के लिए इन्द्रिय का विषय के साथ सन्निकर्ष आवश्यक बतलाया गया है। इस पर यह आपत्ति की गई कि योगी के प्रत्यक्ष पर यह लक्षण घटित नहीं होता क्योंकि योगीजन विना इन्द्रियार्थ सन्निकर्ष के ही योगज शक्ति के आधार पर त्रिकालज्ञ होकर वर्त्तमान, भूत व अनागत वस्तुओं का प्रत्यक्ष कर सकता है। इस आशंका का उत्तर अगले ही सूत्रों में दिया गया है। ५५वां सूत्र यह है—'योगिनां बाह्य प्रत्यक्षत्वान्न दोषः' अर्थात् योगी जनों का बाह्य प्रत्यक्ष न होने से कोई दोष नहीं। प्रत्यक्ष के कई भेद हैं। यथा बाह्य तथा आभ्यन्तर, लौकिक तथा अलौकिक। बाह्य तथा लौकिक प्रत्यक्ष के लिए चक्षु आदि बाह्य इन्द्रियों का अपने विषयों से सम्बन्ध आवश्यक होता है। परन्तु अलौकिक प्रत्यक्ष के लिए इस प्रकार के सम्बन्ध की आवश्यकता नहीं होती है। ५४वें सूत्र में प्रत्यक्ष की हुई परिभाषा के बारे में उपस्थित किये व्याप्ति दोष का यह प्रथम समाधान है। इसमें प्रत्यक्ष लक्षण की सीमा से योगज प्रत्यक्ष को बाहर कर दिया है। किन्तु अगले सूत्र द्वारा किये गए समाधान में योगी के प्रत्यक्ष की भी प्रत्यक्ष लक्षण में समाविष्ट कर लिया है। इस बात को जानने के लिए सांख्य के प्रथम अध्याय के सूत्रों को समझना आवश्यक है।

अपने मूल उपादान (प्रकृति) में विद्यमान रहता है। जो कार्य हमारी दृष्टि से अदृश्य है, भूत या भविष्य में है, वह भी अपने कारण में उसी रूप में अब भी विद्यमान है। योगी अपनी योगज शक्ति से कारण रूप में विद्यमान उस कार्य के साथ अपना सम्बन्ध स्थापित कर उसका प्रत्यक्ष कर लेता है। इसी भाव को सूत्रकार ने कहा है—

**लीनवस्तुलब्धातिशयसम्बन्धाद्वाऽदोषः ॥ १-५६॥**

इसका भाव यह हुआ कि मूल प्रकृति के साथ संबंध स्थापित कर योगी जन अतीत व अनागत वस्तु का प्रत्यक्ष कर लेते हैं। सूत्रकार के इस कथन से प्रधान की महत्ता बहुत बढ़ जाती है। वादी इसको सहन नहीं कर पाता। वह आशंका प्रकट करता है कि श्रुति के आधार पर इस विश्व का मूल उपादान ईश्वर को मानना चाहिए। ऐसा मानने पर प्रकृति को मानने की आवश्यकता नहीं रह जाती। कपिल को यह मत मान्य नहीं है। अतः इस आशंका का उत्तर अगले सूत्र से देते हैं। सूत्र यह है—

**ईश्वरासिद्धेः ॥ १-५६॥**

अर्थात् जगत् के मूल उपादानभूत ईश्वर को सिद्ध नहीं किया जा सकता। यहाँ यह विचारणीय है कि कपिल ने जगत् के मूल उपादान भूत ईश्वर का ही प्रत्याख्यान किया है, उसके अस्तित्व का नहीं। इसका भाव यह है कि ईश्वर की सत्ता है और वह ईश्वर इस जगत् का निमित्त कारण है, अधिष्ठाता है, इसका उपादान कारण नहीं है। पाठक स्वयं विचार करें कि प्रस्तुत सूत्र से ईश्वर की सत्ता का निराकरण कहाँ होता है? इस स्थिति में इस सूत्र के आधार पर सांख्य को नास्तिक ठहराना कहाँ तक न्यायोचित है?

सांख्य पर नास्तिकता का चौथा आरोप बाल गंगाधर तिलक ने लगाया है। अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'गीतारहस्य' में कापिल सांख्य शास्त्र 'अथवा शराक्षरविचार' अध्याय में पृष्ठ १६३ पर उन्होंने लिखा है—'सांख्य शास्त्र के अनुसार सृष्टि के सब पदार्थों के तीन वर्ग होते हैं। पहला अव्यक्त (प्रकृति मूल), दूसरा व्यक्त (प्रकृति के विकार) और तीसरा पुरुष अर्थात् जीव। परन्तु इनमें से प्रलय काल के समय व्यक्त पदार्थों का स्वरूप नष्ट हो जाता है। इसलिए अब मूल में केवल प्रकृति और पुरुष दो ही तत्त्व शेष रह जाते हैं। ये दोनों मूलतत्त्व, सांख्य वादियों के मतानुसार अनादि और स्वयम्भू हैं। इसलिए सांख्यों को द्वैतवादी (दो मूलतत्त्व मानने वाले) कहते हैं। वे लोग प्रकृति और पुरुष के परे ईश्वर, काल, स्वभाव या अन्य किसी भी मूल तत्त्व को नहीं मानते।' पाद टिप्पणी में तिलक ने उक्त भाव को व्यक्त करने वाली एक कल्पित आर्या की रचना की है जो यह है—

**कारणमीश्वरमेकं ब्रूयते कालं परे स्वभावं वा ।  
प्रजाः कथं निर्गुणतो व्यक्तः कालः स्वभावश्च ॥**

तिलक ने यह भी लिखा है कि सांख्यकारिका का रचयिता ईश्वरकृष्ण कट्टर निरोश्वरवादी था।

हमारे विचार में तिलक का उक्त कथन त्रुटिपूर्ण है। पुरुष पद से उन्होंने जीवात्मा का अर्थ निकाला है जो



‘समय की बलिहारी है। इसके चमत्कारों की गति भी बड़ी म्यारी है। पल में कुछ है तो क्षण में कुछ। जिनके मुखमण्डल पर सदा हास्य उभरता था अब उनका मुखड़ा छुबारे-सा लगता है। जो चेहरा कभी गुलाब रहता था अब उस पर पुराना शबाब नहीं। न जाने क्या हो गया है। पुराना रौब दाब कहां खो गया है।’

‘किसकी चर्चा कर रहे हैं भाई।’

‘जिज्ञासानन्द ! न नाम बताया न धाम किन्तु अपने आप ही छेड़े हैं तान। जिनका दुखड़ा रो रहे हैं तनिक उनका नाम भी बताइए श्रीमान्। जिससे कि हो जाए हमारे मन की माँग में आपके इन वचनों के प्रहारों से उमड़े हुए शंका के तूफान का भी समाधान।’ सदानन्द ने जिज्ञासानन्द जी को झुकझोरते हुए कहा।

जिज्ञासानन्द जी के माथे पर पसीने की बूंदें उभर रही थीं। चिन्ता की रेखाएँ बिफर रही थीं। सदानन्द जी से सुनकर यह सवाल उन्होंने बताना आरम्भ किया हाल बहवाल और कहते भए आज हम ये श्री सटकदेव जी शर्मा के यहाँ गए। जबसे वहाँ से लौटे हैं मन है परेशान। रह-रह कर हमें आ रहा है उन्हीं का ध्यान।’

‘कौन शर्मा जी ?’

‘अजी वही आपके पड़ोसी।’

‘जी हमारे पड़ोसी। वे तो अच्छे भले खाते-पीते समाज-सेवी विद्वान् हैं। क्या उन्होंने आपके पधारने पर खिल-खिलाते हुए अपना हाथ बड़े तपाक से आपसे नहीं मिलाया। जिज्ञासानन्द जी क्या आपको उन्होंने चाय का गर्मागर्म प्याला भी नहीं पिलाया।’

‘चाय पानी की तो क्या है बात। हम जो पहुँचे उनके वहाँ गत रात। हमने उन्हें किया नमस्कार। किन्तु वे बड़े मंद से स्वर में बोले। बड़े ही होले-होले ‘नमस्ते भाई! हमने पूछा शर्मा जी क्या परेशानी है ? पहले तो रहे गुम-सुम। किन्तु हमारे बहुत झुकझोरने पर बड़ी ही गमगीन मुद्रा में दिया था उन्होंने जवाब ‘हमें एक लाख रुपए का नकद घाटा हो गया है जनाब।’

हमने पुनः पूछा भैया ऐसा कौन-सा किया था व्यापार। किन्तु आप तो हैं नहीं व्यापारी, अपितु हैं जमे जमाए भारी भरकम अधिकारी। फिर क्या जुए आदि में गई है जन्म-जन्मान्तर की जमा पूँजी हारी।’ हम पूछते रहे किन्तु वे तो बन गए महामौन के अवतार। हम दस मिनट तक बैठे रहे किन्तु शर्मा जी के मुखारविन्द से कोई शब्द पुष्प न भरा। अतएव हमने ली उनसे विदाई। तब से रात भर हमें नींद भी भली-भाँति नहीं आई। उनकी उलझन हमारे लिए है पहेली। उपाय और उनकी विपदा हमारे लिए है पहेली। हमारी बुद्धि अकेली।

सदानन्द बोले, तो आपको नहीं है इस सम्बन्ध में कुछ पता। हमीं देते हैं आपको उनकी हानि का अता पता। उनका जो रोना है वह है सच्चा। क्योंकि उन्होंने सचमुच सहा है घाटा।’

‘भाई वे तो है नहीं व्यापारी। घाटे की बात को सुनकर जाती है हमारी मति मारी। हमने बहुत लगाया है अपनी बुद्धि पर जोर। किन्तु उत्तर शून्य ही है प्यारे। अतः आप ही रहस्य समझाइए हमारा ज्ञान बढ़ाइए। सदानन्द जी।’

‘जिज्ञासानन्द जी ! सुनते जाइए। हम करेंगे कुछ सवाल। उनका देते जाइएगा जवाब। उसी से लग जाएगा शर्मा जी के घाटे का पूरा-पूरा रत्ती, माशे, तोले, छंटाक, पाव और सेरों में सही हिसाब।’

‘अच्छा तो कीजिएगा सवाल। हम देखें अपनी बुद्धि के अनुसार उनका जवाब और फिर लगाते जाएंगे आपके कथनानुसार हिसाब।’

‘तो बताइए जिज्ञासानन्द जी शर्मा जी के कितने हैं ननों के तारे यानी कि भतीजे आपके सलौने और प्यारे-प्यारे।’

भैया उनके पाँच हैं सपूत। यानी कि कमाई के दूत।’

‘तो उनकी आयु कितनी—कितनी है ? यह भी तो आप जानते ही होंगे—जिज्ञासानन्द जी !’

‘हाँ भाई अरुण की २६ साल, तरुण की २५ साल, वरुण की २३ साल, श्रवण की २२ साल व तपन की २१ साल।’ जिज्ञासानन्द ने जवाब दिया।

सदानन्द जी बोले ‘तो अब लगा लीजिए न हिसाब हो गया न पूरे एक लाख का घाटा।’

‘भला यह कैसे लगा है हिसाब ! हमारी खोपड़ी में तो नहीं आता है इस सवाल का जवाब’ जिज्ञासानन्द जी ने पुनः जिज्ञासा जताई।

सदानन्द झल्ला उठे और तमतमा उठे तथा बोले, ‘आपने ही तो किया है उनकी उम्र का वर्णन। तनिक कीजिए और अपनी बुद्धि का घर्षण। आप हो जाएंगे उनके एक लाख के घाटे के हिसाब का सही सही दर्शन।’

जिज्ञासानन्द जी रखे हुए माथे पर हाथ। चुपचाप रहे पाँच मिनट तक बैठे और फिर परेशानी के आलम में बोले ‘भाई सदानन्द ! हमारी बुद्धि तो गई है मारी। कोई जवाब नहीं सूझा ‘आई एम सो सोरी।’

और फिर सदानन्द ने समझाया हिसाब लगाते हुए बताया ‘जी अब बन गया है न दहेज विरोधी कानून। यदि यह न होता तो शर्मा जी हमारे एक-एक पुत्र रत्न के विवाह पर कम से कम बीस-बीस हजार रुपए दहेज के तौर पर वसूली की ये मन में धारे। उनका हो गया है हिसाब गुल। इसीलिए नहीं दिखाई देते हैं प्रफुल्ल। अब गए हैं न आप समझ क्या है उनकी परेशानी। कहिए क्या कुछ और गुणा भाग की गुरुरी भी पड़ेगी सुलझानी।’

# जनरल जोरावरसिंह

—संध्याह सुनामी

जिसके साथ हृदय के तार बंध गए हों, उसके साथ भली-बुरी जो भी घटना बीते उसका पता किसी अनजाने साधन से मन को लग ही जाता है। जोरावर ने कैन्थो के प्राण बचाये थे। उसने जिस वीरता, शौर्य और दक्षता सहित उस भयानक सिंह को ठिकाने लगाया उससे प्रभावित हो आभार और गौरव की भावनाओं से भरी कैन्थो घर पहुँची। वह अपने माता-पिता सहित यहाँ एक सम्बन्धी के यहाँ ठहरी हुई थी।

उसने बड़ी प्रभावी ढंग से सम्पूर्ण घटना का विवरण अपने माता-पिता को सुनाया। उसके माता-पिता जोरावर सिंह का आभार व्यक्त करने उसके घर पहुँचे तो वह आनन्द की एक ऐसी भावना से विभोर हो उठी कि जिसका वर्णन कर पाना भी असंभव है। परन्तु संध्या होते-होते उसका मन भी डूबने-सा लगा।

न तो उसकी कोई वस्तु खोई थी और न ही कोई अशुभ सूचना ही उसे मिली थी। किसी ने उसे न तो बुरा भला कहा था और न ही उस पर कोई आरोप लगाया था, फिर भी न जाने क्यों कोई वस्तु उसके मन को सालने लगी थी।

उसे रात्रि में निद्रा की अवस्था में भी दुस्वप्न ही आये। उसने स्वप्न में देखा कि वह स्वयं शेर बनी वन में भूखी घूम रही है। वह किसी पशु का शिकार करना ही चाहती थी कि उसे सामने से धनुष बाण हाथ में लिए जोरावर आता दिखाई दिया। जोरावर ने उस पर निशाना साधने के लिए अपने धनुष पर बाण रखकर प्रत्यंचा चढ़ाई। उसने दहाड़-दहाड़ कर यह बातें बताने का अथक प्रयास किया कि 'जोरावर मैं तो कैन्थो हूँ। मुझ पर बाण न छोड़ना।' किन्तु जोरावर उसकी कोई बात नहीं समझ पा रहा था। वह जोरावर को रोकने के लिए आगे बढ़ी ही थी कि सहसा ही बाण आकर उसकी छाती में लगा।

कैन्थो सोते-सोते ही चीख उठी।

उसकी माता इस चीख को सुनकर उठ बैठी। 'शेर का भय अभी तक भी बेटी के मन पर छाया हुआ है, आप तनिक उठिये तो !' उसने अपने पिता को इन शब्दों के साथ जगाने का प्रयास किया। कैन्थो का पिता जाना तो उसकी माता ने उसे फिर से अवगत कराया और बोली

कितनी सहम गई है मेरी लड़की !' उसने कैन्थो से भी कहा, 'बस मत बेटी सो जा ! हम सब तेरे ही पास हैं।'

कैन्थो की आँख लगी ही थी कि उसने पुनः एक स्वप्न देखा कि जोरावर एक सिंह पर सवार होकर एक पहाड़ी से दूसरी पर घूम रहा है। दूर, बहुत दूर ! वह हिमाच्छादित शैलमालाओं, घुँघलकों और बादलों तक पहुँच जाता है। फिर वह सिंह जोरावर को अपनी पीठ पर लिये-लिए ही आकाश में उड़ने लगता है। किन्तु सहसा ही एक अंगड़ाई से लेकर जोरावर को नीचे पटक देता है। जोरावर हवा में चक्कर काटता हुआ नीचे आ गिरता है। वह सहारे के लिये इधर-उधर हाथ पांव मारता है। फिर सहसा ही जोरावर का शरीर मानों कांच के तुल्य ही टुकड़े-टुकड़े हो जाता है। उसके शरीर के सैकड़ों टुकड़े हो जाते हैं। किन्तु व्याकुल लोग अश्रु पूरित नेत्रों से उन्हें उठाने के लिए दौड़ते हैं। जैसे कि वे हीरे मोती हों। मुकुट के तुल्य जगमगाता हुआ एक टुकड़ा कैन्थो भी उठा लेती है। किन्तु उससे रक्त के छोटें बिखरने लग जाते हैं।

वह हड़बड़ा कर उठ बैठी। प्राची दिशा में भगवान भुवन भास्कर की रजत किरणें प्रमुदित हो उठी थीं। वह वो क्षण खोई-खोई सी अपने विस्तर पर बैठी रही। फिर उसने अपनी सघन केश राशि संवारी और चुनरी सिर पर ओढ़ी। मन की घबराहट को हलका करने के लिए वह घर के द्वार में आ खड़ी हुई। जहाँ उसका स्वप्न सच हो गया।

जोरावर की माँ पड़ोस की एक स्त्री से बातें करती जा रही थी। 'बहिन जी ! अपने बच्चे को घर से बाहर भेजने को तो जी नहीं चाहता परन्तु पुरुष यदि कमाए नहीं तो घरगृहस्थों का काम चले भी कैसे।'

'कब जाएगा जोरा ?'

'आज ही !' जोरावर की माँ बातें करती हुई पनघट की ओर चली गई। इधर कैन्थो की आँखों के समक्ष अन्धकार छाने लगा। वह सिर पकड़ कर बैठ गई। परन्तु यह समय बैठने का भी तो नहीं था। पता नहीं कि वह कब चला जाये। जाने से पहले एक बार जोरावर को निहारने, उसके दो बोल सुनने की आकांक्षा उसके मन में जाग उठी थी।

कैन्थो ने सरजू को भी अपने साथ न लिया। उसने सोचा कि इसनी गम्भीर और दुःखमयी घड़ियों में भी न जाने वह मुहफ़्त क्या जवाब दे। वह रघुनाथ मन्दिर और उस बड़े-बड़े के वृक्ष के मध्य एक स्थान पर जाकर खड़ी हो गई। उसे विश्वास था कि जोरावर जाने से पूर्व एक बार यदि बड़े-बड़े के वृक्ष के नीचे

पहुँचाने ही न आ जाएं। और उसे अपने मन की कहने का जवबसर ही न मिल पाए।

परन्तु नहीं जोरावर अपने घर से तो विदा ले आया था और अपनी यात्रा पर प्रस्थान करने से पूर्व देवालय में मस्तक झुकाने आया था। कैन्थो ने उसे मन्दिर की ओर जाते हुए देखा। उसने थोड़े से कपड़े आदि भी लिये हुए थे। मन्दिर की ओर जाते समय तो उसने जोरावर को आवाज न दी। परन्तु जब वह पूजन बन्द कर लौट आया तो वह उसके मार्ग में जा खड़ी हुई। उसकी आँखें सजल हो उठी थीं। जोरावर के निकट आते वह आर्द्र स्वर में बोल उठी।

‘जा रहे हो क्या?’

‘हां कैन्थो! परन्तु तुम्हारे नेत्रों में आंसू क्यों हैं? बताओ तो?’

‘यदि मुझे विश्वास होता कि तुम मेरी बात अवश्य मान लोगे तो कहती कि न जाओ। यदि लड़का होती तो कहती कि ठहर जाओ! मैं भी साथ चलती हूँ। जिस सेना में भी भर्ती होंगे, इकट्ठे ही होंगे। जिस मोर्चे पर युद्ध करने जाएंगे साथ-साथ ही जाएंगे। शत्रु पर इकट्ठे ही प्रहार करेंगे और वार भी साथ-साथ ही सहेंगे परन्तु.....’

‘तुम्हें यह क्या हो गया है। कैन्सी पागलों सरीखी बातें कर रही हो। मैं कोई सदा के लिए तो नहीं जा रहा हूँ। आता ही रहूँगा। समय-समय पर!’

‘परमात्मा करे आते ही रहो। यदि भगवान मेरी सुने तो तुम्हारा अधिकारी तुम्हें इधर कहीं आस-पास में ही किसी स्थान पर नियुक्त कर दे।

ओह मेरा इतना ध्यान!’ जोरावर का मन भी तनिक मचल उठा, किन्तु संयम और संयत बोल-चाल यह तो उसका स्वाभाविक गुण था।

‘अच्छा जयराम!’

‘जयराम जोरावरसिंह जी! भगवान करे सिंह विजय के उपरान्त आप अब दिग्विजयी बनें!’ यह वाक्य सुनकर जोरावर आत्म-विभोर हो उठा।

जोरावर अपने मार्ग पर बढ़ चला और कैन्थो के मन में धैर्य का बाँध टूट निकला। उसके नेत्रों से सावन भादों की झड़ियाँ लग गईं। अपने स्थान पर खड़ी वह जोरावर को सब तक निहारती रही जब तक कि वह उसकी दृष्टि से ओझल न हो गया। वह प्रभु से जोरावर की कुशलता और सफलता की कामना भी करती रही। कैन्थो को ऐसा प्रतीत हुआ कि आज उसने अपनी कोई अत्यन्त प्रिय वस्तु गंवा दी है। कुछ क्षण बाद वह वहाँ से हटी और धीरे-धीरे सहमी-सहमी बस्ती की ओर चल पड़ी।

उधर से आती सरजू दिखाई पड़ी। उसने उसे देखते ही पुकारा ‘कैन्थो!’

‘मैं तो वहाँ बँटने तुम्हारे घर गई थी। परन्तु तुम मेरी खोज में यहाँ चली आई।

‘रो तो नहीं रही हूँ। घूल उड़ कर आँख में आ गिरी थी। इसीलिए पानी निकल आया।’

‘दुख की अग्नि छिपाने का प्रयास करोगी तो वह लावे के समान मानसिक श्रम को प्रकट कर देगी। अपने मन का दुखड़ा यदि तुम अपनी इस सखी को भी न सुनाओगी तो यही पीड़ा दिल का घाव बन जाएगी, पगली!’

‘वह चला गया।’

‘हूँ...ऐसा तो प्रायः सभी के साथ होता है। पहाड़ी बालाओं का तो भाग्य ही कुछ ऐसा है मेरी सखी। पर्वतीय युवक तो जवान होते ही बहुधा कामकाज की खोज में मैदानों की ओर चल पड़ते हैं और नगरों के युवक सैर सपाटे के लिए पर्वतीय अंचलों की ओर आते हैं। वह ग्रीष्म के कुछ दिन यहाँ बिताते हैं। पहाड़ी कन्याओं के समक्ष प्रेम के झूठे सच्चे नाटक रचकर उन्हें सदा के लिए निराश और हताश अवस्था में छोड़ जाते हैं।

किन्तु मुझे उससे प्रेम तो नहीं था और न उसे मुझ से। मेरे मन में कभी विवाह की बात भी तो नहीं आई। परन्तु इस पर भी पता नहीं क्यों हर क्षण उसे देखते रहने को ही जी चाहता है। आखिर उसने प्राणों की बाजी लगाकर मेरी जान बचाई है। अतः एक कृतज्ञता का भाव है, उसके प्रति मेरे मन में। मैं तो उसकी वीरता और शौर्य की उपासक हो गई हूँ।’

‘अरी छोड़ भी उसका ध्यान। वह भी कोई ऐसा जवान था कि जिस पर अपना मन बाँरा जाए। कभी सीधे मुँह बात भी करता था वह किसी लड़की से। हमारे लिए तो जैसे उसका यहाँ रहना था वैसा ही चला जाना। कभी दो क्षण प्रेम के बोल भी बोले थे क्या तेरे साथ उसने? अपने मन से उसका विचार छोड़ दे। हाँ तो भगवती के मेले में चलेगी न।’

‘हां, अवश्य चलूँगी और वहाँ जगदम्बे से प्रार्थना करूँगी कि प्रत्येक संकट से उसकी रक्षा करे। सरजू! तनिक मेरा हाथ थाम ले! कहीं मैं भी अन्धकार में ठोकर खाकर न गिर पड़ूँ।’

और उधर जोरावर प्रत्येक बाधा को ठुकराता, ग्राम की स्मृतियों को भुलाता, भविष्य के स्वप्न देखता अपने मार्ग पर चलता रहा। वह पठानकोट होकर लाहौर जाना चाहता था, जिससे कि वह महाराजा रणजीतसिंह की सेना में भर्ती हो सके। जम्मू के डोगरा राजपूत सरदारों के दो लड़के गुलाबसिंह और ध्यानसिंह महाराजा रणजीतसिंह के दरबार में उच्च पद पर आसीन थे। वे महाराजा के प्रमुख विश्वासपात्र अधिकारी में थे। उनके अतिरिक्त भी सैकड़ों डोगरा युवक सामान्य अधिकारियों और सैनिकों तथा विषाहियों के रूप में रणजीतसिंह की सेना में शामिल थे। जोरावर को भी आशा थी कि उसे वहाँ कोई न कोई काम अवश्य ही मिल जायेगा। लाहौर जाते समय मार्ग में उसे एक ग्राम में रात बिताने के लिए ठहरना पड़ा। यहीं उसे विदित हुआ कि विद्रोही पर्वतीय राजाओं की कुचलने के लिए रणजीतसिंह की सेना पर एक ग्राम में पड़ाव था।

जोरावर के लिए तो यह शुभ सूचना ही थी। उसके मन में इच्छा हुई कि अभी सैनिक पड़ाव का पता लगाकर वहाँ पहुँच जाये, परन्तु धर्मशाला के उदार चित्त ब्राह्मण प्रबन्धक के समक्ष जब उसने अपनी यह इच्छा व्यक्त की तो उसने उसे रोक दिया कि रात को भयानक जंगल के मार्ग से होकर जाना उचित न होगा। क्योंकि वन अंचल हिंसक पशुओं, सर्पों विच्छुओं आदि से भरपूर है और सेना ने भी तो अभी कई दिन वहाँ रहना है।

परन्तु अगले दिन प्रातः काल ही वह प्रबन्धक को प्रणाम कर और उससे मार्ग पूछकर चल पड़ा। उसे तो वस सेना में भर्ती होने की ही घुन सवार थी। वह तो यही आश्वासन अपने मन में संजोये हुए था कि रणभूमि में अपनी वीरता और रणकौशल दिखाकर सेना में शीघ्र ही कोई उच्च पद प्राप्त कर लूँ जिससे परिवार की आजीविका तो चले ही साथ ही साथ उसकी प्रतिष्ठा भी बढ़े। इन्हीं कल्पनाओं में खोया-खोया वह अपने मार्ग पर बढ़ता चला जा रहा था।

वह ऊबड़-खाबड़ मार्ग को पार करता, नदी नालों को लाँघता तेज कदम रखता अपनी मंजिल तय करता जा रहा था। वह इस सम्बन्ध में भी पूर्णतः सतर्क था कि कहीं किसी भाड़ी आदि से निकलकर कोई सिंह, चीता आदि हिंसक पशु उस पर आक्रमण न कर दे। कहीं लम्बी-लम्बी घास में रंगते हुए किसी सर्प आदि पर ही उसका पांव न पड़ जाये और वह उसे डस ही न ले।

अन्त में जंगल की सघनता घटने लगी और किसी के गीत का स्वर उसके कानों में गूँजने लगा। यह किसी पुरुष की आवाज थी। वह कोई पर्वतीय गीत नहीं अपितु किसी और ही बोली का गीत बड़े स्वर और लय के साथ गा रहा था। सामने अमलताश के वृक्ष के झुण्ड के नीचे जिसमें ढेर सारे फूल खिले थे। एक समतल स्थान पर कई सैनिक जिनमें एक दो हिन्दू और शेष सिख थे आराम से बैठे थे और एक सिख सैनिक यह गीत गा रहा था।

बे ! वड्डा इकबाल सरकार तेरा ।  
दिक्ता रब्ब एह मरतब घजाधारी ॥  
बाई राजे पहाड़ी सलाम कर दे ।  
मल्ला टेक दी खलक, तमाम सारी ॥  
टेरही; कांगड़ा अटक पशौर ताई ।  
खँवर कम्बया वेख के घमक भारी ॥  
जाफर बेग, सिखाँ खँवर दास कीती ।  
पैदा भाजड़ा विच्च कंधार सारी ॥  
वाह वा ! वल्ले वल्ले ! ! शेर पंजाब तेरा इकबाल !

उस गायक ने नसों में रक्त को गरमा देने वाले स्वर में आगे कहा—

ते—तावे कई हजार राजे ।  
सन्दलदीप, अजमेर, उज्जैन ताई ॥  
घूरों, टाप्पुओं नन्द नोच ले गोरे ।  
हल्य बनह आ करन ताजीम ताई ॥  
चीने, कुल्लू, भूटान भी भरे, आये ।

जाफर बेग सरकार दी घमक भारी ।

टके आंवदे चीन की चीन ताई ॥

इनसे आगे सहस्रों लोगों की बातचीत और घोड़ों की हिनहिनाहट का विचित्र शोर, कई प्रकार की ध्वनियाँ आकाश में गूँज रही थीं। जिधर देखो तम्बू ही तम्बू, छोलदारियाँ ही छोलदारियाँ। पर पानी ढोने वाले कहार, कन्धों पर बहंगियाँ और उनके पालनों में तीन-तीन घड़े घरे आते थे। घसियारों और लकड़हारों की भारी संख्या हरी घास और सूखी घास के गठुर सिरों पर लादे सेना और घोड़ों के राशन के लिए ताँता बाँध रही थी। साग, सब्जी से लदे खच्चरों और टट्टुओं के काफिले भी दूर कहीं से छावनी की ओर आ रहे थे। उनकी चाल में शीघ्रता थी तो उनके हाव भाव से सेवा भावना भी परिलक्षित हो रही थी।

जोरावर ने अनुभव किया कि जहाँ कोई वैभवशाली व्यक्ति जा ठहरता है, जंगल में भी मंगल ही हो जाता है। पशु, पक्षी और मानव सभी उसकी सेवा में लग जाते हैं। वह उन अमलताश के वृक्षों की ओर बढ़ा, जिनके नीचे बैठे सैनिक गा बजाकर मनोरंजन में तल्लीन थे। क्यों न हों ! महाराजा रणजीतसिंह मोरी और पीरी (ब्रह्म तेज और धात्र तेज) के स्वामी गुरु गोविन्दसिंह का नाम लेते हैं। जिन्होंने कहा था—

कीनों बड़ो कलू में साका ।

तिलक जंजु गाखा प्रभु तांका ॥

‘सत्य है’ एक हिन्दू जो अपनी बोलचाल और आकृति आदि से पंजाब के बाहर किसी अन्य प्रदेश का प्रतीत होता था बोला, ‘गुरु साहेब ने पंजाब में मुगलों और पठानों के अत्याचारों से घर्म की रक्षा की थी, उसी प्रकार दक्षिण में छत्रपति शिवाजी ने परकीय आक्रान्ताओं के पराधीनता-पाश को काटकर हिन्दू पद-पादशाही की स्थापना की थी।’

‘निःसन्देह !’ एक ऊँचे डील-डोल और प्रभावी आकृति वाले सिख सरदार ने कहा, ‘शिवाजी यदि कुछ वर्ष और जीवित रहते तो इन अंग्रेजों के पाँव भी भारत में न जमने देते, जो आज सतलज पार दनदना रहे हैं। अभी देशवासी एक खतरे से उभरे भी नहीं थे कि दूसरा आ घमका।’

धीमे-धीमे चलता जोरावर उनके पास जा खड़ा हुआ। उस सरदार ने उस भव्य व्यक्तित्व वाले नवयुवक को बड़ी ही सहानुभूति पूर्ण दृष्टि से सिर से पाँव तक देखा। फिर पूछा, ‘क्यों जवान क्या जम्मू तबी से आ रहे हो।’

‘जी सरदार साहेब !’

‘डोगरा हो क्या ?’

‘जी, हाँ !’

‘नौकरी के लिए आये हो अथवा किसी रईस राजा का सन्देश लेकर ?’

‘नौकरी के लिए ही उपस्थित हुआ हूँ’

राजा गुलाबसिंह और राजा ध्यानसिंह को महाराजा रणजीतसिंह के राजदरबार में वह उच्च स्थान प्राप्त है जो बहुत थोड़े से सिख सरदारों के भाग में आया है। लाहौर दरबार के लिए भी उनकी सेवाएँ अनमोल हैं। घमंडासिंह इस जवान को ले जाओ और स्नान ध्यान कराकर भोजन करा दो। फिर इसे गणवेश और हथियार दिलाकर छावनी के उस भाग वाले अधिकारी के पास पहुँचा दो। नवयुवक तुम अपना और अपने पिता जी का नाम तथा घर का पता बताते जाओ।

‘जी मेरा नाम जोरावरसिंह, पिता जी का ठाकुर हरजीसिंह और निवास-स्थान रयासी है।’

जोरावर सिख सैनिक के साथ चल पड़ा।

‘आपका यह अधिकारी तो बहुत भला प्रतीत होता है।’

‘बहुत भला ! परन्तु भाई ! यह सेना है इसमें भले बुरे सभी प्रकार के अधिकारियों से वास्ता पड़ता है। अतः एक सिपाही के लिए नितान्त आवश्यक है कि वह नरम-गरम प्रत्येक प्रकार के स्वभाव वाले अधिकारी के अधीन रहना सीख ले।’

‘ठीक कहते हैं आप।’ जोरावरसिंह को लगा कि उसकी सैनिक शिक्षा का पहला पाठ आरम्भ हो गया है।

छावनी के वातावरण में खूब चहल-पहल थी। सिपाहियों के दल और पथक अपने अपने कार्यों में दत्त चित्त होकर जुटे थे। कुछ बरछे चाने का अभ्यास कर रहे थे तो कुछ तलवार चलाने का। कहीं शर संधान के कमाल दिखाई दे रहे थे तो कहीं बलिष्ठ युवक अखाड़े में उतरकर मल्ल युद्ध का अभ्यास कर रहे थे। जोरावर इन सभी दृश्यों को ध्यान से देखता चला। वह स्वयं भी तो इन्हीं विद्याओं में निपुण था। परन्तु यहाँ भी उसे अनेक कलावन्त दिखाई दिये। आखिर इन्हीं जवानों के सहयोग और रणकौशल से ही तो महाराजा रणजीतसिंह को अनेक युद्धों में अपनी विजय पताका फहराकर शत्रु पक्ष को परास्त करने में सफलता मिली थी।

एक ओर एक बड़े से शामियाने के नीचे एक चौकी पर बैठे कोई सन्न ग्रन्थी कोई ग्रन्थ पढ़ रहा था, जिसको सुनने के लिए शामियाने के नीचे बिछी दरियों पर सत्तर अस्सी व्यक्ति बड़े संयम नियम से बैठे थे। उनके बीच में दो व्यक्ति पीतल की बड़ी परातों में कोई वस्तु डाले उन लोगों को बाँट रहे थे। जब ये उनके पास से निकले तो एक परात वाले ने निकट आकर उन्हें भी बारी-बारी से प्रसाद के रूप में हलवा दिया साथ ही दो-दो बताशे भी।

‘लो ! और लो ! ! नये आने वाले को दूसरा गपका।’

‘घमण्डासिंह ने अपना भोग खा लिया। जोरावरसिंह ने भी हलवा खा लिया। घमण्डासिंह ने ग्रन्थी की ओर मुख किया और शीघ्र झुकाया। जोरावरसिंह ने भी उसका

कुछ सीख लेता है वह घर में वर्षों रहकर भी नहीं सीख पाता।

स्नान, पूजन और भोजन से निवृत्त हो गणवेश प्राप्त करने के उपरान्त जब जोरावरसिंह उस तम्बू के सामने पहुँचा जिसमें कुछ डोगरा और कटोच सिपाही रहते थे तो घमण्डासिंह उनसे बोला—

‘यह डोगरा सिपाही जोरावरसिंह आज ही भर्ती हुआ है ! यह आप लोगों के साथ ही रहेगा। इसे भी रात की गिनती पर अपने साथ लेते जाना और सैनिक नियम व ढंग आदि समझा देना।’

पहाड़ी सिपाहियों ने उठकर जोरावर का स्वागत किया। उन्होंने उसके लिए एक कक्ष भी खाली कर दिया। उसका विस्तर और वर्दी भी एक ओर रखवा दी। उनमें से एक ने पूछा, ‘कहाँ के रहने वाले हो भाई ?’

‘रयासी का।’

जोरावरसिंह ने अपना सामान एक ओर टिका दिया और उससे टेक लगाकर बैठ गया।

‘तुम्हारे भर्ती होने की हमें सचमुच ही प्रसन्नता हुई है।’ एक सिपाही बोला, ‘भला अपने प्रदेश के व्यक्ति को पाकर किसे प्रसन्नता नहीं होगी। परन्तु यदि भर्ती होने से पूर्व तुम मुझे मिल जाते तो मैं सुभाव देता कि कहीं अन्यत्र जाकर नौकरी कर लो। यहाँ भर्ती न होना।’

जोरावरसिंह चौंक सा पड़ा—‘क्यों क्या बात है भाईया ?’

‘वात यह है कि यहाँ हमें घृणा और अपमान की दृष्टि से देखा जाता है।’

‘डोगरों को।’

‘डोगरों को ही क्यों अन्य कईयों को भी।’

जोरावरसिंह को जैसे उसके शब्दों का विश्वास नहीं आ पा रहा था। वह बोला, ‘जिस सिख सरदार से मैं बाहर मिला था और जिसने मुझे भर्ती करके इधर भेजा है, वह तो डोगरों का बड़ा आदर करता है वह बड़ा भला और बुद्धिमान प्रतीत होता है।’

‘सभी बड़े सिख अधिकारी तो प्रायः भले ही हैं, परन्तु सेना में थोड़े ही लोग ऐसे हैं जो अपने को छोड़कर और किसी को भी अच्छा नहीं समझते। वे घृणा और पृथक्वाद का बेहूदा प्रदर्शन करते रहते हैं। वे इस बात का दावा करते हैं कि उन्हीं का वर्ग गुरुधर के ज्ञान का वास्तविक जानकार और उत्तराधिकारी है। परन्तु ऐसा लगता है कि उन्हीं ज्ञान ध्यान की अपेक्षा वैमनस्य और घृणा का ही अधिक ज्ञान है। कई दिन हुए ऐसे ही लोगों ने एक पुरबिया सिपाही को केवल इसलिये पीटा कि वह छावनी के बाहर जाकर चिलम पी रहा था।’

‘उसने इस ज्यादाती की अपने अधिकारी से शिकायत नहीं की।’

## स्वास्थ्य चर्चा

### —ज्योत्सना

## ठण्डे पेय लीजिये

गर्मियों की दोपहरी में जब ठण्डा पेय हम लेते हैं, तो मन प्रसन्न हो जाता है और खोई हुई शक्ति पुनः लौट आती है। आप भी घर में ठण्डे पेय बनाइये।



गर्मियों की तपती दोपहरी में जब ठण्डा पेय हम लेते हैं, तब मन प्रसन्न हो जाता है। खोई हुई शक्ति पुनः लौट आती है। आप भी गर्मी में इस्तेमाल करने के लिये घर में ठण्डे पेय बनाइये। नीचे कुछ ठण्डे पेय बनाने की विधि दी जा रही है।

### टमाटर ककड़ी साइडर

सामग्री—1 कप टमाटर का रस, 2 बड़े चम्मच ताजे नींबू का रस, 2 बड़े चम्मच वारसेस्टर सास, 1 छोटी कटी हुई प्याज, 1/2 कप छोटे-छोटे टुकड़ों में कटी ककड़ी, 1 छोटे चम्मच नमक, 6 आइस क्यूब।

विधि—ऊपर लिखी सारी सामग्रियों को एक बड़े शीशे के जग में एक में मिला दीजिए। आधे या एक घण्टे तक इस जग को रेफ्रिजरेटर में रख दें। परोसने के तुरन्त पहले उसे छान लें। अब उसमें 6 आइस क्यूब्स डालकर उसे खूब अच्छी तरह हिलायें। अब इसे 6 छोटे-छोटे गिलासों में उंडेल कर 6 व्यक्तियों को पीने को दें। यह पीने में बहुत ही स्वादिष्ट होता है।

### मसालेदार आइस काफी

सामग्री—1/2 छिलका उतारा हुआ सन्तरा, 2 चम्मच 'काफी' 1 फेमिली साइज वेनिला आइसक्रीम, 2 चम्मच दूध, जायफल, 6 दालचीनी के टुकड़े।

विधि—काफी में छिले हुए सन्तरे को डालकर उसे लगभग 5 मिनट तक छोड़ दें। अब इस घोल को और क्यूब्ड आइसक्रीम को 6 गिलासों में विभक्त कर लें। अब ऊपर से दूध डाल दें अब पिसे हुए जायफल को उस पर छिड़कें। अब प्रत्येक गिलास के साथ एक-एक दालचीनी का टुकड़ा रख दें। इस दालचीनी के टुकड़े से चला-चला कर इस काफी को पियें। यह आपके मन को तरोताजा कर देगा।

### काफी आइसक्रीम सोडा

शक्कर, 1 कप ठण्डा पानी, 1 फेमिली साइज त्रिक काफी आइसक्रीम, 1 बोतल लेमन्ड या क्रीम सोडा।

विधि—काफी के अतिरिक्त अन्य सभी सामग्रियों को पिसी हुई शक्कर और पानी में मिला दें। अब इन मिली हुई सामग्रियों को लगभग 5 मिनट तक उवाले। पांच मिनट पश्चात् आंच पर से उतार कर इसे अच्छी तरह से ठण्डा कर लें। अब एक बड़े करदुल से काफी आइसक्रीम को 4 बड़े-बड़े गिलासों में डाल दें। अब उसमें काफी सीरप डाल दें। प्रत्येक गिलास को लेमन या क्रीम सोडे से भर दें। अब इस बने हुए काफी आइसक्रीम सोडे को चार व्यक्तियों को पीने के लिए दें।

### डबल अनानास फिलप

सामग्री—2 कप अनानास के कटे हुए टुकड़े, 4 बड़े चम्मच पिसी हुई शक्कर, 1 फेमिली साइज त्रिक वेनिला आइसक्रीम, 1 बड़े बोतल लेमन्ड या क्रीम सोडा।

विधि—अब अनानास को अच्छी तरह पीस लें। उसमें पिसी हुई शक्कर डालकर खूब अच्छी तरह हिलायें और इस घोल को चार बड़े गिलासों में बराबर-बराबर मात्रा में उंडेल लें। अब 1 बड़े चम्मच आइसक्रीम और 1/2 कप लेमन या क्रीम सोडा प्रत्येक गिलास में डाल दें। अब एक बड़े चम्मच आइसक्रीम डालकर इस घोल को खूब अच्छी तरह चलायें। अब तीन गिलास भरने के लिये लेमन सोडा गिलास में डाल दें। गिलास के सबसे ऊपर 1/4 भाग में आइसक्रीम डाल दें। इसे चार व्यक्तियों के पीने के लिए दें।

### अंगूर का शरबत

सामग्री—12 कप अंगूर का रस, 10 बड़े चम्मच चीनी, 2 कप वरफ का चूरा, 1 कप दुध का खोया, जायफल।

विधि—अंगूर के रस में चीनी मिला दें। अब वरफ को एक कटोरे या प्याले में रख लें। उस प्याले के ऊपर खोया डाल दें। इसके पश्चात् उस प्याले पर धीरे धीरे रस और चीनी का घोल डालती जाएं। अब इसे तब तक चलाती रहें जब तक यह दही की तरह जम न जाय। इसे खूब तेजी से झटका दे-देकर तब तक हिलाती रहें, जब तक कि यह ठण्डा न हो जाय और ऊपर की घोर खूब फेन आ जाय। इस घोल को 8 बीच के साइज के गिलासों में भर दें। ऊपर से जायफल छिड़क कर इसे पियें। यह स्वादिष्ट होने के साथ-साथ स्वास्थ्य की दृष्टि से भी उत्तम सिद्ध होगा।

## क्या आप अच्छे पड़ोसी हैं ?

मानव एक सामाजिक प्राणी है। समाज के बिना मानव अधूरा है और मानव के बिना समाज भी अपूर्ण है। मानव समाज की सशक्त एवं मूल इकाई है। वही समाज का आधार है। जन्म के बाद ज्यों-ज्यों बालक बढ़ता है, त्यों-त्यों उसका सामाजिक दायरा भी बढ़ता जाता है। वह अपना जीवन एक दायरे में व्यतीत करता है, कुछ कर्त्तव्यों और अविकारों में बाध होकर।

पारिवारिक सम्बन्धों यानि की माता-पिता के पश्चात् निकटतम सम्बन्धी पड़ोसी ही होता है। संसार का प्रत्येक प्राणी सर्वप्रथम एक पड़ोसी होता है। वह स्वयं किसी का पड़ोसी होता है और कोई उसका पड़ोसी होता है। आप भी तो पड़ोसी हैं, किन्तु आप कैसे पड़ोसी हैं अच्छे या बुरे.....पड़ोसी तो प्रत्येक प्राणी को आवश्यक रूप से बनना पड़ता है फिर क्यों न अच्छा ही बना जाये। आपको भी पड़ोसी बनना ही है तो एक अच्छा पड़ोसी बन कर एक उच्च आदर्श स्थापित कीजिए।

कहा जाता है कि पड़ोसी का सम्बन्ध रक्त के संबंध से भी कहीं अधिक महत्वपूर्ण एवं नजदीकी होता है। पड़ोस का सम्बन्ध उतना ही मधुर एवं घनिष्ठ होता है, जितना कि किसी अन्य सम्बन्धी एवं मित्र का रिश्ता।

खून के रिश्ते भी इतने निकट नहीं रहते जितने कि पड़ोसी के। पड़ोसी मानव का सर्वाधिक निकटतम साथी होता है। वही मानव के दुःख-सुख का सर्वप्रथम साथी होता है। सच्चा पड़ोसी वही है, जो सुख-दुःख में, प्रत्येक अवस्था में प्रत्येक मूल्य पर साथ दे। दुःख-सुख में भागीदार बनने के लिए सदैव तत्पर रहे।

क्या आप भी ऐसा ही करते हैं। आप भी अपने पड़ोसी को दुःख-सुख में अपना पूर्ण सहयोग देते हैं। क्या सचमुच आप एक अच्छे पड़ोसी बन कर देश को एक योग्य नागरिक प्रदान कर रहे हैं ? जरा अपने गिरेगान में झाँक कर देखिए तो.....

(1) क्या पड़ोसी के साथ आपके सम्बन्ध मधुर एवं सुखद हैं ?—

(2) क्या आप अपने पड़ोसी के प्रति ईर्ष्या-भावना अथवा अन्य दुर्भावना रखते हैं ?

(3) क्या आप पड़ोसी के सच्चे सहयोगी एवं शुभ चिन्तक हैं ?

(4) क्या आप पड़ोसी के दुःख-सुख को अपना समझते हैं ?

(5) क्या विपत्ति की स्थिति में आप अपने पड़ोसी को अपना पूर्ण सहयोग देते हैं ?

(6) क्या आप अपने पड़ोसी के व्यक्तिगत कार्यों में अपना हस्तक्षेप करते हैं ?

(7) क्या आप पड़ोसी के रहस्य को रहस्य ही रहने देते हैं ?

(8) क्या आप सदैव पड़ोसी का भला ही सोचते हैं, चाहे स्वयं आपको हानि ही क्यों न उठानी पड़ती हो ?

(9) क्या आप अपनी आवश्यकता को उपेक्षित करके पड़ोसी की आवश्यकता पूरी करते हैं ?

(10) क्या आप कोई भी ऐसा काम करने से पहले पड़ोसी का भला सोचते हैं, जिसका सम्बन्ध पड़ोसी से भी हो ?

(11) क्या आप पड़ोसी के बच्चों को अपने बच्चों जैसा ही प्रिय समझते हैं ?

(12) क्या आप पड़ोसी के मेहमानों का स्वागत अपने पड़ोसी समझ कर करते हैं ?

(13) क्या आप पड़ोसी के सम्मान और अपमान को अपना सम्मान-अपमान समझते हैं ?

(14) क्या आप कभी पड़ोसी को नीचा दिखाना चाहते हैं ?

(15) क्या आप पड़ोसी की निन्दा करते हैं ?

(16) क्या आप अपने पड़ोसी के प्रति कोई बुरी भावना रखते हैं ?

(17) क्या आप अच्छे पड़ोसी बन कर अपने पड़ोसी के सामने एक आदर्श स्थापित करते हैं ?

(18) क्या आप अच्छे पड़ोसी को अच्छा पड़ोसी बनने की प्रेरणा प्रदान करते हैं ?

(19) क्या आप पड़ोसी की प्रगति से सन्तुष्ट हैं ?

(20) क्या आपको अच्छा पड़ोसी बनने और अच्छा पड़ोसी पाने का गौरव प्राप्त है ?

(शेष पृष्ठ २० पर)

# आर्यसमाज नई राह पर

मात्रात्मक परिवर्तन की अपेक्षा गुणात्मक परिवर्तन जरूरी है।

आर्यसमाज के संविधान में परिवर्तन आवश्यक।

आर्यसमाज का नया मोर्चा भूख और बीमारी रूपी दैत्य के विरुद्ध होगा।

—पं० नरेन्द्र व ओम्प्रकाश शास्त्रार्थ महारथी के उद्गार



वैदिक सेवाश्रम वाजेगाँव का २१, २२, २३-अप्रैल को अष्टम वार्षिकोत्सव संपन्न हुआ। स्वामी सोमानन्दजी (पं नरेन्द्र जी हैदराबाद), ओम्प्रकाश जी शास्त्रार्थ महारथी, पं० विश्वनाथ जी व पं० नरदेव जी स्नेही आदि के ओजस्वी भाषण व भजन हुए। जिससे विदित हुआ कि द्वितीय शताब्दी के प्रथम चरण में आर्यसमाज एक नये रूप में निखर-संवरकर जनता-जनार्दन की सेवा के लिए, पहले से और ज्यादा कटिबद्ध हो मैदान-जंग में उतर रहा है।

स्वामी सोमानन्द जी ने इस बात पर खेद प्रकट किया कि—‘आर्यसमाज में हमने प्रवेश किया, पर हममें आर्यसमाज प्रवेश न कर पाया। अनेक आर्यसमाजी ‘आधे तीतर आधे बटेर’ का जीवन जी रहे हैं। आर्यसमाज में ‘आधे तरबूज व आधे खरबूजों की धुसपंठ बड़ी संख्या में हो रही है। इन धुसपंठियों के रास्तों को रोकना होगा। मात्रात्मक परिवर्तन की अपेक्षा गुणात्मक परिवर्तन जरूरी है। संख्यात्मक आधार पर संस्था का विस्तार निरर्थक सिद्ध हुआ है। संस्था की सफलता संख्या पर नहीं, किंतु आचरण पर मानी जायेगी। आज हवन कुंड की आग बुझे तो भी हमें परवाह नहीं, पर हम हमारे हृदय में स्थित देव दयानन्द के सिद्धान्तों की हवन कुंड की आग बुझने न देंगे। इसके लिए आर्यसमाज की चुनाव प्रणाली व संविधान में क्रांतिकारी परिवर्तन होने जरूरी हैं।

अब केवल पैसे देने वाला व्यक्ति ही आर्यसमाज का प्रधान नहीं बनेगा, अब वही व्यक्ति आर्यसमाज का सभासद बन सकेगा, जिसने पूरे परिवार को आर्य बनाया हो, और आर्य सिद्धान्तों की परीक्षा उत्तीर्ण कराई हो, ‘ऐरे गेरे नथू खेरो’ से आर्यसमाज के सभासदों की आवादी बढ़ाने की कोई आवश्यकता नहीं। स्वामी सोमानन्द जी का यह प्रत्येक वाक्य स्वामी सोमानन्द जी के नहीं, किन्तु उनकी आत्मा से निकल रहा था—ऐसा दृष्टिगोचर होता था।

प्रकाश जी खतोली वाले ने कहा कि— इस नई शताब्दी में आर्यसमाज जो कुछ बोलेगा उसका सम्बन्ध केवल मस्तिष्क से ही नहीं, पेट से भी होगा। वह बुभुक्षित: कि न करोति पापम्’ की व्यावहारिक गहराई को पहचानता है, और इसीलिये उसने ईसाइयों के मुकाबले में पेट का प्रश्न हल करने की योजनाएँ बनायी हैं, और इसी के साथ वह ‘नस’ का सहानुभूति शील हृदय ले भोपड़ियों में भी पहुँचेगा जहाँ जिदगी दवाइयों के बिना अकाल काल कवलित हो जाती है। अब आर्यसमाज स्कूल-कालेजों पर निरर्थक खर्च न कर भूख व बीमारी रूपी दैत्य के पंजों से छुड़ाने के लिए छटपटा उठा है। इस शताब्दी के प्रथम चरण में आर्यसमाज ‘बाल मंदिरों’ पर ज्यादा जोर देगा, क्योंकि इस समय पर पड़े आर्य संस्कार आजीव अमिट रहते हैं। बालक मंदिर की स्थापनाओं से ही देश के दूषित धातावरण में तबदीली संभव है। ऐसा आर्यसमाज का विश्वास है। इस युग में वह खंडनात्मक पहलू की अपेक्षा रचनात्मक पहलू पर अधिक बल देगा, और उन नेताओं से सदैव सावधान रहेगा। जो अपने-अपने स्वार्थों महत्वाकांक्षाओं के राजनैतिक पट्ट गले में डाल आर्यसमाज का दुरुपयोग करने के लिए आतुर होते हैं। आर्यसमाज के क्षेत्र में व्याप्त अमीर-गरीब के भेदभाव को समूल नाश करने की ओर भी उन्होंने इशारा किया। अमीर आर्यसमाजी बीमार पड़ जाता है तो अनेकों व्यक्ति सहानुभूति दिखाने के लिए जाते हैं, पर गरीब आर्यसमाजी बीमार पड़ता है तो वहाँ कोई पानी देने भी नहीं पहुँचता। इस कटु वाक्य के लिए क्षमा मांगते हुए उन्होंने हर प्रकार के भेदभावों को भूल जाने का आह्वान किया। उन्होंने बड़े दुःख के साथ कहा कि जग को जगाने वाला आर्यसमाज ही सो गया, तो जग की क्या स्थिति होगी? खतोली वाले जी ने कहा कि—स्वामी श्रद्धानन्द, लाला लाजपत राय, स्वतंत्रानन्द, लेखराम, भाई श्याम लाल, बंसीलाल आदि के संस्मरणों का जल है।

द्वितीय शताब्दी के मर्यादा पर रूढ़ि करवट से रहे

कम नहीं हुई है, पर ये बुजुर्गों के फल कब तक चल सकोगे ? नई-नस्ल आर्यसमाजी रक्त से शून्य है. उन्हें आर्यत्व की दीक्षा में दीक्षित करना होगा।

दक्षिण प्रचार अभियान की डेढ़ महीने की यात्रा समाप्त कर लातूर, परली, निलंगा होते हुए स्वामी सोमा नन्दजी व पं० ओमप्रकाशजी शास्त्रार्थ महारथी ने ये विचार वैदिक सेवाश्रम-वाजेगांव के अष्टम वार्षिकोत्सव पर प्रकट किये। अगर इन पर आर्यसमाज ने सक्रिय कदम रखा तो देश व विश्व का भविष्य स्वर्णिम-सुखद होगा। वह दिन तभी आयेगा जब ये विचार हर हृदय मंदिर में पूजे जायेंगे। बस, 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।' गते द्रोणे हते भीष्मे कर्णे च विनिपातिते। अशा बलवती-राजन् शल्यो जेष्यति पांडवान्।'

इस आयोजन को सफल बनाने का सर्वाधिक श्रेय श्री शिव मुनिजी व सत्यपाल जी राठौर, बड़ी नारायणजी तोष्णीवाल, मनोहर शास्त्री, वापूराव सोनटक्के श्री वैज नाथ हालिगे को है। शिव मुनिजी की शक्ति अपार है। आर्य जगत् उनसे अनेक अपेक्षा रखता है। 'अगर वैदिक सेवाश्रम का बौद्धिक पक्ष व व्यावहारिक पक्ष की बागडोर क्रमशः पं० नरेन्द्र जी व शिव मुनि जी संभाल लें तो दक्षिण भारत का चित्र बदल सकता है। दक्षिण भारत में उपयुक्त विचार जोर पकड़ता जा रहा है। इसी में दक्षिण आर्य जगत् का भविष्य भी उज्ज्वल है। ईश्वरेच्छा बलीयसी, वयं जयेम, संगठन प्रभावशाली हो।

## आर्यसमाज बिड़ला लाइन्स में आर्ययुवक सम्मेलन आयोजित

नई दिल्ली—आर्य युवक कांग्रेस दिल्ली प्रदेश के तत्वावधान में रविवार २ मई ७६ को दोपहर ढाई बजे आर्यसमाज बिड़ला लाइन्स में पंजाब के आर्य संन्यासी स्वामी सुधानन्द की अध्यक्षता में आर्य युवक सम्मेलन आयोजित किया गया। सम्मेलन में आर्य युवा विद्वान पं० प्रेमपाल शास्त्री ने रोहतक छात्राव्दी में पारित प्रस्तावों को लागू करते हुए आर्यसमाज के विकास पर बल दिया।

सम्मेलन में स्वामी इन्द्रवेश ने अपने श्रोतस्वी वक्तव्य में कहा कि आर्यसमाज के शीर्षस्थ नेतृत्व को अपने संकीर्ण विचार त्याग कर सच्चाई स्वीकार करनी चाहिए।

सम्मेलन में गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ के आचार्य स्वामी वरुणवेश ने आर्य जगत् से स्वामी श्रद्धानन्द के खून से सींचे गये गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ के पुनर्संस्थान हेतु जन-मन-धन

(पृष्ठ १५ का शेष)

## फ्रूटी डिलाइट

सामग्री—4 कप सेव का जूस, 4 कप ताजे सन्तरे का जूस, 4 कप चेरीज।

विधि—सबसे पहले सेव के जूस और ताजे सन्तरे के जूस को एक में मिला दें। अब इस घोल में भीगे हुए चेरीज को डालकर इसे खूब अच्छी तरह ठण्डा कर लें। अन्त में इसे 6 गिलासों में भरकर 6 व्यक्तियों को पीने के लिये दें।

## केले का ठण्डा पेय

सामग्री—4 केले, 2 कप दूध, एक बड़े चम्मच शहद, एक बड़े चम्मच अच्छी तरह तरासा हुआ नारियल का बुरादा।

विधि—केले को खूब अच्छी तरह छील कर खूब अच्छी तरह मसल लें। दूध और शहद को खूब अच्छी तरह फेट लें। इन्हें केले में मिलाकर गिलासों में भर दें और ऊपर से नारियल का बुरादा डालकर पीने के लिए प्रयोग में लायें।

## सुगन्धित चाकलेट

सामग्री—8 चाय की चम्मच पीने की चाकलेट, 4 बड़े चम्मच उबला हुआ पानी, दारचीनी, 3 कप ठण्डा किया हुआ दूध, 1 कप क्रीम।

विधि—पीने की चाकलेट को पानी में अच्छी तरह घोल लें। अब एक चुटकी पिसी दालचीनी उसमें डाल दें। इसके पश्चात इसमें दूध डालकर इसे भटके के साथ हिलायें। अन्त में इसे कई गिलासों में रख लें और गिलास की सबसे ऊपरी सतह पर क्रीम और पिसी दालचीनी डालकर इसे पीने के लिये दें। इसे पीने के बाद सारी थकावट दूर हो जाती है।

## —आर्य समाज दोस्तपुर के निर्वाचन में

श्री महेन्द्र प्रताप आर्य प्रधान, श्री नन्द लाल आर्य उप प्रधान, श्री नरेन्द्र प्रताप आर्य उप प्रधान, श्री रमाजीत आर्य मंत्री एवम् श्री देवी प्रसाद आर्य व श्री कन्हई प्रसाद आर्य उपमंत्री तथा श्री गुलाब चन्द आर्य पुस्तकाध्यक्ष व मिश्री लाल आर्य व श्रीराम आर्य प्रचार मंत्री व श्री हरीराम आर्य लेखा निरीक्षक निर्वाचित हुए।

—आर्य समाज देवघर (वैजनाथ धाम) के चुनाव में श्री महादेव शरण प्रधान, श्री नरसिंह शाह उप प्रधान, श्री उमाकांत शास्त्री मंत्री, श्री छोटे लाल शाह उप मंत्री एवम् श्री देवदत्त प्रसाद आर्य कोषाध्यक्ष चुने गए।



—जयभगवान प्रेमी

## सहनशीलता की प्रतिमूर्ति : नारी

नारी ! तुम शक्ति रूपिणी को अवला नाम देने वाला कोई निरा अनजान ही रहा होगा। तू कौन है दुनियां में ऐसा जिसने तेरे मोहन मन्त्र को न सुना हो ? और कौन है जो इस मन्त्र से मुग्ध होकर तेरे सामने नत-मस्तक न हुआ हो ? बड़े-बड़े दिग्विजयी वीर और सम्राट् जिनके नाम-मात्र से ही लोगों के दिल दहल जाते थे। तेरे भू-भृंग मात्र से ही घुटने टेकते रहे हैं। अनेक रूप धरतू दम्भियों का दर्प मर्दन करती है, आखिर किस-लिए ? पागल को सचेत करने, अज्ञान अंध की आँखें खोलने के लिये और निर्दय को सहृदय बनाने के लिये। गहरे गर्त में गिरे हुए को तू ऊपर उबारती है। डूबते हुए को किनारे लगाती है। हे सबले ! दयामयी नारी ! तुझे नमस्कार।

नारी जगत्-जननी, पद दलितों के उद्धार के लिए, पीड़ित पराधीन देश को आजाद कराने के लिए तूने सरदार भगतसिंह, गांधी, सुभाष, पटेल और वीर सावरकर को जन्म दिया। धर्म प्रचार पाखण्डगढ़ हठाने के लिए कवीर, नानक, महर्षि दयानन्द और विरजानन्द को जन्म दिया। बढ़ते जुलूम को समाप्त करने के लिए तूने ही राणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, गुरुगोविन्द सिंह और वन्दा बैरागी जैसे वीरों को जन्म दिया। और तो क्या तूने बाल अभिमन्यु का वलिदान कर दिया। धन्य है तू पन्ना घाय, जिसने अपने इकलौते पुत्र को हत्यारे वनवीर के हाथों सौंप कर चित्तौड़ के राजकुमार के प्राणों की रक्षा की।

नारी तू सहन-शीला है। तपस्विनी है और ऋषि वर विश्वामित्र का प्रचण्ड तप सकाम होने के कारण तेरी तपस्या के समक्ष मन्द हो जाता है। सर्दी की रात है। ठण्डी हवा तीर की भांति चुभती है सर्दी के मारे शरीर कांप रहा है। वच्चे को अपनी जगह सुलाकर तू स्वयं गीले में सो जाती है—माता ! तू समस्त जगत् की आधारशिला है। तू जिस प्रकार का पद निर्माण करना चाहे अपने निज

लिखते हैं, माता निर्माता भवति। हे नारी, मन्तानों में नवजीवन की नींव रखने वाले हाथ माताओं के ही होते हैं। मीठी-मधुर लोरियों के साथ माता सन्तानों में वे भाव भर देती हैं जो किसी भी दूसरे स्थान में प्राप्त नहीं हो सकते। जननियां जाति के जीवन की वास्तविक जड़ हैं। सन्तति को उन्नति के उच्चतम शिखर पर ले जाने के लिए जगमगाती ज्योतियां हैं। धन्य हैं वे माताएं, जो गर्भाधान से लेकर जब तक विद्या पूरी नहीं हो जाती तब तक सुशीलता का उपदेश करती हैं।

मातृमान् पितृमान् आचार्य पुरुषो वेद। इसीलिये तो प्राचीन काल में माता को प्रथम स्थान दिया जाता था। सबले ! पत्निरूप में तू पुरुष की अर्धांगिनी कहलाती है। तू पुरुष की मन्त्रिणी है, उसकी विधात्री है। तू गृहलक्ष्मी है। घर के मन्दिर को सजाकर तू उसमें निवास करती है और अपने देवता की आराधना करती है। तू घरित्री बनकर संसार में सहन शीलता दया, धर्म व क्षमा का आदर्श उत्पन्न करती है। हे देवी तुझे नमस्कार।

विश्व प्रसिद्ध मैत्रेयी याज्ञवल्क्य संवाद भी सभी को याद होगा। माता गान्धारी तेरे नयनों की दिव्य दृष्टि पड़ने ही तेरे पुत्र दुर्योधन का समस्त शरीर पापाण वत हो गया था। धन्य है ऐसी देवियां जिन्होंने नल नील से कारीगरों को, हनुमान और अंगद से पुत्रों को जन्म दिया। तारामति के रूप में अपने पति हरिश्चन्द्र के साथ सत्य-रक्षण के लिये तूने कष्ट झेले। ..... कामायनी, वैप-स्वती, लोपामुद्रा, यमी, शची, भामती, श्रद्धा, अहिंसा जैसी विश्व-प्रसिद्ध नारियों को कौन भुला सकता है।

कालीदास को कालीदास बनाने वाली विद्योत्तमा को कौन नहीं जानता और सभी को महारानी लक्ष्मी बाई की तेजस्विनी तलवार अभी तक याद है। मुर्दों को जलाने वाली अमृत वर्षक मुखड़ा और वीर यह नारी रूपी शक्ति तू ही है। तेरे गुणों का पुजारी संसार सदैव आभारी रहेगा। तेरी शक्ति अपार है जननी तू धन्य है, तुझे नमस्कार है।

हे नारी ! वहन बनकर तू स्नेह मूर्ति बन जाती है। भाई को युद्ध में, वन में, घर में उत्साहित करती है। तेरी राखी की मर्यादा रखने के सम्बन्ध में इतिहास के अनेक पृष्ठ भरे हैं। अन्त में पुत्री का रूप धारण करके तू पैर पुजवाती है। तू पिता के हृदय का टुकड़ा, मां की आँखों का तारा है।

सुन्दर और सचित्र नारी, ईश्वर की उत्कृष्ट कारी-गरी, पृथ्वी का अपूर्व चमत्कार और संसार का एकमात्र आश्चर्य है :

—कु० सत्या

कोमलता सदा विराजमान रहते हैं। विषुद्धता; कोमलता, और वात्सल्य उस हवा रूप के उपादान हैं। श्रद्धा, शान्ति और ममता उसकी नीति है। लोबध, लज्जा और रूप उसके आभूषण हैं। धैर्य, सहष्णिता और निःस्वार्थ भाव उस मूर्ति का अन्तःकरण है। संसार बंधन के लिये नारी रूपी रज्जु न होती, तो मनुष्य सामाजिक संगठन शक्ति का महत्व कदापि अनुभव न कर पाता और संसार रूपी वन में वह पागलों की भांति विचरता रहता। नारी वर्तमान और भविष्य के बीच की जाज्वल्यमान तारिका है। जीवन पथ की विश्राम छाया है। भाव सागर की तरणी है। परलोक की मुक्ति और स्वर्ग की सौन्दर्यमयी लालिमा है।

मानव के प्रत्येक पहलू में नारी का सर्वोच्च स्थान है। नारी को भूलना मनुष्यता का अपमान करना है। तभी तो बुद्ध ने यशोधरा से यह कहलवाया है।

“दीन न होये, सुतो दीन नहीं, नारी कभी,  
भूत, दया, मूर्ति वह तन से मन से।

और नारी की प्रतीक श्रद्धा मनु, से कहती है :—

“दया, माया, ममता, लो आज, मधुरिम लो अगाध-  
विश्वास हमारा हृदय रत्ननिधि स्वच्छ, तुम्हारे लिये खुला है दास।”

संसार के कर्म क्षेत्र में प्रधानतया गृहस्थ के लिए नारी अनिवार्य है। जिसके अभाव में भी कोई भी कार्य सुसम्पादित नहीं हो सकता। नारी सौन्दर्य, कोमलता, स्नेह और शील की देवी है। नारी ने अपने प्रेमाश्रुओं से संसार के हृदय को उसी प्रकार घेर रखा है जिस प्रकार समुद्र पृथ्वी को घेरे हैं। नारी की आंखों में ईश्वर ने दो जगमगाते हुए दीपक जला दिए हैं, जिसके प्रकाश में भूले भटकते मनुष्य अपना रास्ता देखते हैं। नारी रूपी मधुर सरिता में ही मनुष्य अपनी चिन्ताओं और दुःखों से त्राण पाता है। कवियों के लिये यह कल्पतरी है। कलाकारों के लिए एक कला है।

नारी को केवल भोग की वस्तु समझना बृथा है। नारी के जीवन चरित्र को कोई नहीं जान सकता। जहां नारियों की पूजा की जाती है वह स्थान पवित्र होता है।

हे नारी ! अनेक रूप धारिणी, स्वरूपिणी, तेरी गुणा-  
वली शेष नहीं है। तेरे गुण कहां तक गए जायें कृत्यों को हम सैकड़ों गुणों से भी नहीं कह सकते। हे देवी, जन्म दात्री तुझे मेरा नमस्कार है।

## सत्यार्थ-प्रकाश

२००) सैकड़ा—छोटा अजिल्द

२५०) सैकड़ा—बड़ा अजिल्द

५०) सैकड़ा—बड़ा सजिल्द

५०) सैकड़ा—कपड़े की जिल्द

## गरीबी मिटाने के लिए परिश्रम करो

अपने सभी भाइयों और बहनों से मेरा निवेदन है कि वे यदि उन्नति करना चाहें तो जीवन में कठोर परिश्रम करें।

परिश्रम एक ऐसी पूंजी है जिसे हम बहुत आसानी से जुटा सकते हैं। इसे न कोई छीन सकता है, न बांट सकता है। हम अगर अपने स्वभाव को ही थोड़ा सा बदल डालें तो यह हमारे पास स्वयं आ जाता है। और फिर इसके द्वारा हम बड़े-बड़े काम भी आसानी से कर सकते हैं।

आज देश में गरीबी है। इसे मिटाने के बहुत से उपाय बताए जा रहे हैं, पर यदि देश का प्रत्येक नागरिक परिश्रम करने में लग जाए तो गरीबी का नाम तक भी चन्द दिनों में मिट सकता है।

मैं देखती हूँ कि आज के नौजवान भाई और बहन फ़ैशन में, कपड़ों में बहुत ध्यान देते हैं पर, काम से वचते हैं। पढ़ लिख कर तो वे केवल क्लर्क ही बनना चाहते हैं।

यही कारण है कि जरा सी आवश्यकता निकालने पर हमारे कार्यालय में भी भीड़ लग जाती है। पर इतनी भीड़ में भी काम करने वाले मिलने कठिन रहते हैं।

कठोर श्रम, सादगी और ईमानदारी यह तीन मंत्र हैं जिन से हमारा भविष्य सुनहला बन सकता है। और हम देश को उन्नत करने के साथ-ही-साथ अपने को भी सुखी रख सकते हैं।

ईमानदारी हमारा धर्म बने, मेहनत हमारी साधना हो और हम सभी काम करने के लिए सदा तैयार रहें—

सफलता का यही मूल मंत्र है।

(पृष्ठ १६ का शेष)

उपरोक्त बीस सूत्रों का ध्यान पूर्वक अध्ययन कीजिए एवं भली प्रकार मनन कीजिए और देखिए कि वस्तुतः आप एक अच्छे पड़ोसी हैं ? अथवा नहीं ?

बीस सूत्रों में से कितने सूत्र आपके पक्ष में हैं तथा कितने सूत्र विपक्ष में ?

आप कितन-कितन प्रश्नों के उत्तर हां में पाते हैं और कितने उत्तर नहीं में ? आपको एक अच्छा पड़ोसी होने का अधिकार एवं गौरव प्राप्त है अथवा नहीं ? पड़ोसी के प्रति आपका अपना दृष्टिकोण कैसा है, ये जानने के लिए 20 सूत्रों के भली प्रकार पढ़िए और ‘हां’ अथवा ‘न’ में उत्तर दीजिए।

यदि आपके 15 उत्तर ‘हां’ में और 5 उत्तर नहीं में हैं, तो निश्चय ही आप एक अच्छे पड़ोसी हैं। आपका अच्छे पड़ोसी होने का अधिकार एवं गौरव प्राप्त है। और अच्छा पड़ोसी ही अन्य अच्छा पड़ोसी प्राप्त कर सकता है अन्यथा अभी आप में कोई कमी है। आपका अच्छा पड़ोसी बनने के लिए प्रयासरत रहना चाहिए, पड़ोसी के प्रति अपना दृष्टिकोण बदलिए।

अपने दृष्टिकोण को निरन्तर विशाल, विस्तृत एवं

## विज्ञान जगत

### १-प्राथमिक चिकित्सा के लिए

अंतरल आक्सीजन उपकरण

### २-बर्फ हटाने के लिए नए

उपकरण !

### ३-तैराकी के जलाशयों को शुद्ध करने के लिए चांदी का प्रयोग ।

### ४-कार्ड पर अंकित करने वाला टेप-रिकार्डर



### प्राथमिक चिकित्सा के लिए अंतरल आक्सीजन उपकरण

दिल के दौर, श्वासबोध, गैस-विणक्तता या किसी ऐसी आकस्मिक स्थिति से पीड़ित रोगियों के लिए, जिसमें आक्सीजन देने से रोगी को आराम पहुँच सकता है, अब एक नये प्रकार का हल्का अंतरल आक्सीजन उपकरण उपलब्ध है। इसका कुल वजन ढाई पीण्ड है और इस में से १.६ गैलन प्रति मिनट की दर से कम से कम १५ मिनट तक आक्सीजन प्रवाहित होता है।

इसका नाम 'सोलोजन डिस्पेंसर' है। इसके भीतर आक्सीजन उत्पन्न करने वाले शुष्क रसायन से भरा एक घाटिक कनस्तर, और इसके ढक्कन के भीतरी एक चेहरे की ढकने वाली नकाब होती है। पूरे उपकरण का आकार साधारण बोतल जैसा होता है। इसका उपयोग करने वाला व्यक्ति इसके ढक्कन को खोल कर नकाब को रोगी की नाक और मुँह पर लगा देता है। और फिर एक बटन दबा देता है, जिससे आक्सीजन प्रवाहित करने वाला रसायन सक्रिय हो जाता है। इस उपकरण में एक सकेतक पुर्जा होता है, जो यह बताता है कि आक्सीजन प्रवाहित हो रहा है या नहीं। आक्सीजन देते समय एक कनस्तर का रसायन समाप्त हो जाने पर उसी जगह अविलम्ब दूसरा कनस्तर लगाया जा सकता है।

कम्पनी, एलायड फार्मास्युटिकल्स, कर रही है। उसका कहना है कि यदि इस उपकरण के कनस्तर को आल-मारी में रखा जाए तो वह दो साल तक खराब नहीं हो सकता। कनस्तर से युक्त उपकरण शून्य से लेकर १६० अंश फारेनहाइट तक के ताप मान में सक्रिय हो सकता है। इतने ताप मान में संग्रह करने पर इसमें किसी तरह का विकार उत्पन्न नहीं हो सकता।

### बर्फ हटाने के लिए नये उपकरण

जोरैगन (अमेरिका) की एक फर्म, पोर्टलैण्ड वायर ऐण्ड आयरन वर्क्स, के ट्यूबलोक प्रोडक्ट्स डिविजन ने ट्यूबलोक हिम हल (स्नोप्लाऊ) और हिम पंख (स्नोविंग) नामक दो ऐसे उपकरण तैयार किये हैं, जिन्हें बड़ी शीघ्रता से किसी मोटर ग्रेडर या इवील लोडर से जोड़ कर हिम या बर्फ हटाने के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। हिमहल का आकार अंग्रेजी के 'वी' अक्षर जैसा है। इसे चालक स्वयं ही दो मिनट में किसी ग्रेडर के सामने जोड़ सकता है, या उससे पृथक् कर सकता है।

हिम पंख को ग्रेडर की बगल में जोड़ा जाता है। उसके दाहिने या बायें पार्श्व में जोड़ने के लिए पंख के अलग-अलग माडेल उपलब्ध हैं। ग्रेडर और हिम पंख के बीच गति का सन्तुलन बनाये रखने के लिए हाइड्रालिक सेप्टी वाल्व की व्यवस्था की गयी है। इससे किसी प्रकार के प्रयोग में ग्रेडर या हिमपंख को कोई क्षति नहीं पहुँच सकती।

हिम हल का परीक्षण ऊँचे पर्वतीय दरों में २४ इंच से लेकर ६फुट गहरी हिम पत को हटाने के लिए किया जा चुका है।

### तैराकी के जलाशयों का पानी

### शुद्ध करने हेतु चांदी का प्रयोग

कहते हैं कि सिकन्दर महान कीटाणुओं को नष्ट करने के लिए चांदी के पात्रों में पाने का पानी मंगाया करता था। ऐसा विश्वास किया जाता है कि अब से २ हजार वर्ष पूर्व मैसीडोनिया के सैनिक घाव को विपाक्त होने से बचाने के लिए उस पर चांदी के बर्तन बांधा करते थे। इस प्रकार यह निर्धारित हो चुका है कि चांदी कीटाणुनाशक होती है। हाल में इसके इस गुण की खोज अन्तरिक्ष वैज्ञानिकों पर अन्तरिक्षयात्रियों ने की है, जो समानव अन्तरिक्षयानों के लिए पानी शुद्ध करने के हेतु चांदी का प्रयोग करते हैं।

अब अमेरिका में पैसिल्वेनिया की एक फर्म, जनरल इकोलाजी, इन्फार्पोरेटेड, केयरफी नामक एक नये उपकरण का निर्माण कर रही है।

बड़े और छोटे तैराकी के जलाशयों के पानी को शुद्ध किया जा सकता है। इस प्रकार, स्विमिंग पूलों में क्लोरीन का प्रयोग करने से पानी में जो दुर्गन्ध आ जाती है, या उससे आँखों में जो जलन होती है, उससे मुक्ति मिल जाती है और पानी भी शुद्ध हो जाता है। साथ ही, यह उपकरण जैव प्रदूषकों को हटाने के लिए विद्युत संचारित चारकोल का प्रयोग करता है। फल-स्वरूप नहाने का पानी ऐसा स्वच्छ और तरल हो जाता है, मानो किसी पहाड़ी निर्भर का पानी हो।

क्लोरीन की तुलना में चांदी के आयोन को प्रयुक्त करने की विधि अधिक सरल और निरापद है। निर्माताओं का कहना है कि इसमें जलाशय के स्वामी को केवल 'पूलीफायर' को चालू करना पड़ता है। उसके बाद उसे किसी तरह की परेशानी उठाने की जरूरत नहीं पड़ती। पानी अपने आप शुद्ध हो जाता है। प्रतिदिन पानी की जांच करने की भी जरूरत नहीं पड़ती। पूलीफायर को लगभग १२ महीने के बाद फिर विद्युत-संचारित करना पड़ता है। इन व्ययों को जोड़ देने पर भी पूलीफायर का प्रयोग क्लोरीन-प्रणाली की अपेक्षा सस्ता पड़ता है। चांदी का प्रयोग भी इतनी कम मात्रा में किया जाता है जिससे मनुष्य के लिए वह हानिकारक नहीं होती। निर्माताओं का कहना है कि सोवियत संघ और अन्य यूरोपीय देशों में भी चांदी का प्रयोग जल को शुद्ध करने के लिए किया जाता है। निर्माताओं के अनुसार, एक अन्य लाभ यह है कि इसका प्रयोग करने पर आग लगने या विस्फोट होने का कोई खतरा नहीं रहता।

**सन्देश अंकित करने वाला टेपरिकार्डर**

न्यूयार्क की एक फर्म स्कूलों, उद्योगों तथा अन्य लोगों के लिए एक नये प्रकार का टेपरिकार्ड तैयार कर रही है, जो कार्ड पर सन्देश अंकित करके उसे पुनः सुना सकता है। निर्माताओं का कहना है कि "वोक्सकीम" नामक यह टेपरिकार्डरों की तुलना में कम खर्चीला और ४ गुना अधिक सक्षम है। यह किसी एक कार्ड पर १२० शब्द अंकित कर सकता है, जो किसी मुद्रित सन्देश, रेखाचित्र या फोटो को भी प्रदर्शित कर सकता है। इस पर पुरानी किस्म के कैसटों को भी अंकित या मुखरित किया जा सकता है।

"वोक्सकीम" इतना सरल है कि इसे साधारण बच्चा भी चला सकता है। यह टैप-टैप की पट्टियों का प्रयोग करता है जिन्हें कार्ड के पीछे चिपका दिया जाता है। उसके बाद, बोलने वाला व्यक्ति "वोक्सकीम" को चलाता है जो सन्देश की टेप पर कार्ड के एक

है। इसके बाद कार्ड को कई बार बजा कर सुना जा सकता है।

यह उपकरण सुपाठ, शब्द भाषा और गणित के प्रशिक्षण के लिए विशेष रूप से उपयोगी है। छात्र स्वाध्याय के लिए इसका प्रयोग कर सकते हैं। इसका निर्माण न्यूयार्क की फर्म, टेपकोन इन्कारपोरेटेड, कर रही है।

## संस्थान के नए प्रकाशन

### १. आर्याभिविनय

काव्यमय व्याख्या सजिल्द २.५०  
अजिल्द १.५०।

### २. वैदिक गृहस्थाश्रम—सजिल्द

पं० विश्वनाथ विद्यामार्तण्ड

मूल्य ६ रु०

### ३. वैदिक गीता (पद्यानुवाद)

मूल्य १ रु०

### ४. दयानन्द चित्र दर्शन

मूल्य २० रु०

किन्तु प्रचार के लिए

अभी मूल्य

१५ रु०

### ५. संस्कार विधि:

राज संस्करण, बड़ा साइज,

कपड़े की जिल्द

मूल्य ६ रु०

सादी मूल्य ४ रु०

छोटा साइज

मूल्य ३ रु०

शीघ्र संग्रहण

दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली-११०००५

# “दहेज”

\*\*\*

‘देखिए वर्मा जी, हम बीस हजार रुपये से कम तो ले ही नहीं सकते।’

‘मैं आपके हाथ जोड़ रहा हूँ मुझ पर दया कर दीजिए। एक मामूली-सा क्लर्क हूँ इतने रुपये कहाँ से जुटाऊँ? ये दस हजार भी मेरी जिन्दगी भर की कमाई है, दीनानाथ जी।’

‘आप खुद समझदार हैं हमने अपने लड़के को बी.ई. करवाया है मंहगाई का जमाना है, इसकी पढ़ाई पर भी इससे कम क्या खर्च हुए होंगे।’

‘जहाँ तक पढ़ाई का सवाल है मेरी मंजु भी एम.ए. फर्स्ट क्लास है और सिलाई बुनाई तथा पाक कला में डिप्लोमा होल्डर भी।’

इतना सुनते ही दीनानाथ ने साफ-साफ कह दिया—‘मुझे लड़की-वड़की से क्या करना। मैं एक ही बात जानता हूँ—बीस हजार रुपए। अगर चाहो तो दस हजार टीका (फलदान) पर देने होंगे और बकाया दस हजार शादी पर। शादी एक साल बाद होगी और प्रत्यक्षतः ‘आदर्श’ होगी। एक माह के अन्दर हमें फलदान मिल जाना चाहिए।’

यह कहकर दीनानाथ जी अपने दो साथियों के साथ उठकर चले गए। किन्तु वर्मा जी को को लगा कि मेज पर रखे खाली बर्तनों की तरह उनका दिमाग भी खाली हो गया है—शेष रहा है तो केवल एक शब्द—‘बीस हजार।’

वैसे यह कोई नई बात नहीं थी। पिछले चार साल में अनेकों सज्जन मंजु को देखने आए, पसंद भी किया किन्तु बात वही पन्द्रह-बीस हजार रुपयों पर आकर रुक गई। पर अब की बार वर्मा जी को बड़ी आशा थी क्योंकि दीनानाथ जी ‘नगर दहेज निवारण समिति’ के अध्यक्ष थे और जाने-माने सुधारवादी। उनका पुत्र रवि वर्मा, बी. ई. पास करने के बाद सहायक अभियंता के पद पर कार्यरत था। देखने में भी ‘सुन्दर, सुडोल। वर्मा जी तो मानो उस पर लट्टू थे।

वर्मा जी—आयु लगभग पैंतालीस वर्ष, किन्तु चश्मे के नीचे आँखों पर झुर्रियाँ अघषके बाल उम्र से पहले ही बुढ़ापा ले आए थे। ४५० रुपये मासिक पर वन विभाग में एकाउन्टेन्ट थे वे। पतिवार में उनकी पत्नी, बड़ी पुत्री

लिया गया था। किन्तु इस चयन ने हर्ष के साथ ही परिवार में मेडिकल में भर्ती कराने की पीस की एक नई चिंता पैदा कर दी थी।

दीनानाथ जी के आने पर परिवार में बड़ी उमंग थी। जहाँ प्रवेश मेहमानों के सत्कार में लगा था, वही तुष्टि ने मंजु की नाक में दम कर रखा था। उनकी माँ तो सुबह से रसोई घर से निकली ही नहीं। दीनानाथ जी के दो-टुक जवाब से जैसे तुफार-सा पड़ गया। वर्मा जी भी आहत से अपनी चारपाई पर आ लेटे। किन्तु आँखों में नींद कहाँ? वे तो जोड़, बाकी, गुणा, भाग करके कैसे भी उनका उत्तर बीस हजार लाने में व्यस्त थे पर वह दस हजार से ज्यादा आया ही नहीं। अगर पत्नी के जेवर भी बेच दें तो लगभग पन्द्रह हजार बँटता है—जैसे भी हो वे लड़का हाथ से नहीं जाने देना चाहते थे। दूसरी ओर उनका बीस साल पुराना सपना टूट रहा था। प्रवेश के जन्म से पहले ही वे उसे डाक्टर बनाने की सोच चुके थे। उन्होंने उसे ‘पिताजी’ कहना बाँद में सिखाया होगा शायद ‘डाक्टर’ पहले। ‘बेटा तुम क्या बनोगे’ के उत्तर में जब नन्हा प्रवेश ‘दाक्टर’ (डाक्टर) कहता तो वे फूले नहीं समाते। और आज प्रवेश का मेडिकल में चयन बहुत बड़ी विजय बना बन गया है। एक ओर मंजु का भविष्य है दूसरी ओर प्रवेश का। प्रवेश को एडमिशन दिलाता मंजु के भविष्य की हत्या है, दूसरी ओर मंजु का विवाह-प्रवेश के भविष्य की हत्या।

चार-पाँच दिन के अन्तर्द्वन्द्व के बाद भी वे जब कोई निर्णयन कर सके तो एक दिन शाम को पत्नी और प्रवेश को जिसे संस्कारों ने आयु से अधिक समझदार बना दिया था, अपने बैठक के कमरे में बुलाया। पत्नी की राय तो थी कि बेटे को मेडिकल में दाखिला दिला दिया जाय और मंजु को अन्य घर-घर तलाशा जाय। किन्तु प्रवेश ने बड़े सीधे शब्दों में कह दिया—‘पिता जी, दीदी के स्वर्णिम भविष्य में ही हमारी खुशी है। मेरा एडमिशन उतना अनिवार्य नहीं जितना दीदी का विवाह। मैं भी कहीं सविस ढूँढता हूँ बाद में एम० एस सी० करके कोई अन्य अच्छी सविस मिल जाएगी।’ वर्मा जी एक ठण्डी निःश्वास भर छोड़ पाए।

अन्ततः मंजु की माँ भी मंजु के विवाह की प्राथमिकता देने में सहायक हो गयीं। वे भी तो बेचारी मुहल्ले वालों, रिस्तेदारों के ताने, फुसफुसाहट सुन-सुनकर तंग आ चुकी थीं, सयानी बेटी अनजबानी जो थी उनके घर में। इस निर्णय का विरोध किया तो मंजु ने, पर उनकी कौन सुनने वाला था।

×

×

रसोई घर के चूल्हे की भेंट हुए अपने मेडिकल के ‘चयन पत्र’ और फार्मों को जलते हुए प्रवेश चुपचाप देख रहा था, किन्तु जलते हुए फार्मों के अक्षर-अक्षर में केवल प्रवेश ही के नहीं, उन लाखों भाइयों के सपने तथा स्वर्णिम भविष्य जल रहा था, जिन्हें वहाँ के दहेज के लिए इसी तरह कुर्बानियाँ देनी पड़ती हैं।

पुत्र का फलदान हुआ। उन्होंने पूरे दस हजार रुपये वर्मा जी से चुरचाप प्राप्त कर लिए। विवाह बगली गर्मियों में तय हुआ क्योंकि रवि बाबू को १० माह का कोई प्रशिक्षण लेना था।

×

×

दुनिया भर का सोभाग्य मानो मंजु को ही मिल गया है। सगाई हुए पन्द्रह दिन ही हुए होंगे कि बैंक की नौकरी का लिपिक पद का नियुक्तिपत्र आ गया। यह एक संयोग ही था, क्योंकि यह मंजु का सातवाँ इण्टरव्यू था। इसके पहले भी छः हो चुके थे जो इतने ही सफल रहे थे। घर खुशियों से भर उठा। वर्मा जी को भी बकाया दस हजार की राशि जुटाने में आशा की किरण नजर आ गई। मंजु को चार सौ रुपया मासिक मिलने वाले थे।

नियत दिनांक को मंजु समय से पहले ही पंजाब बैंक के दफ्तर पहुँच गई। अब मंजु के आगे फाइलों का ढेर था और पीछे लंबा अतीत का सिलसिला। मंजु... पैदा क्या हुई, वर्मा जी के घर में खुशियाँ बिखर गयीं—मंजु... माँ की लाइली बिटिया—पिता का प्यारा बिलौना—मंजु... गीत गाने, खो-खो खेलने-पढ़ने सभी में कक्षा में सबसे आगे। इण्टर की कक्षा तक पहुँचते-पहुँचते तेज और बातूनी मंजु विनम्र, सीधी, और गम्भीर मंजु में बदल गई—मंजु... कालेज की समाज-शास्त्र की छात्रा सुन्दर, आकर्षक किन्तु लड़कों को 'लिफ्ट' न देने के लिए प्रसिद्ध मंजु—गीतों से मंच पर पूरा अधिकार रखने वाली—मंजु... एम० ए० मंजु—बेरोजगार और अब—मिस मंजु वर्मा, लिपिक।

सबसे पहले परिचय हुआ, मिस रीता सहगल से, जिसकी नियुक्ति उसके साथ ही हुई थी, बाद में स्टाफ के अन्य सदस्यों से भी परिचय हुआ। मुख्य लिपिक श्री कुलश्रेष्ठ ने मंजु को कोई काम बताया और वह उसमें व्यस्त हो गई।

दूसरा दिन—मंजु फाइलों में फिर खो गई। अचानक 'नमस्ते मंजु जी' की आवाज ने उसे चौंकाया।

'अरे... नमस्ते मनीष जी, आप यहाँ कैसे?'

'मैं यहाँ सहायक मैनेजर के पद पर हूँ।' कल मैंने लिस्ट में तुम्हारा नाम जरूर देखा था किन्तु कुछ समझ न पाया। आज देखा तो तुम यों। बड़ी ख़ुशी की बात है, मुबारक हो तुम्हें अपनी सविस्तर।' बाद में मनीष ने रीता से भी परिचय किया। फिर पास खड़े श्री कुलश्रेष्ठ की ओर इशारा करते हुए कहा—'श्री कुलश्रेष्ठ जी, आप इन्हें रुचि पूर्वक मार्ग दर्शन देते रहिए जिससे इन्हें काम सीखने में सहूलियत हो।'।

'जी, सर... धन्यवाद।'।

मनीष अन्दर की ओर अपने कमरे में चला गया।

मनीष जब एम० काम० में पढ़ता था तब मंजु बी० ए० में एक ही कालेज में। कालेज के छात्रों का प्रिय नेता मनीष—किसी भी अन्याय के खिलाफ लड़ने से लेकर किसी निर्वन छात्र की फीस भरने या पुस्तकें दिलाने तक में आगे बढ़ सकता था। उसके चरित्र के कारण लड़कियाँ

अवश्य थे। एम० काम० के बाद मनीष ने मैनेजमेण्ट का डिप्लोमा किया और अब वह सहायक मैनेजर था।

×

×

अब मंजु अपनी 'लिपिक' की दिनचर्या की अभ्यस्त हो चुकी थी। बैंक में काम करते छः माह बीत चुके थे और पाँच माह का पूरा वेतन बैंक में ही अपना खाता खोलकर जमा कर चुकी थी। सुबह से व्यस्त हो जाती, दिन भर फाइलों में सर खपाती, यकी-हारी रात को लेटकर सो जाती। अपने कार्य के प्रति पूर्ण ईमानदार और नियमित। छः माह में केवल एक बार अवकाश लिया चार दिन का। उसे सर्दी लगने के कारण दुखार आ गया था। इस बीच अन्य सहकर्मियों की तरह मनीष भी, पहली बार उसकी तबियत देखने उसके घर पहुँचा। वैसे तो इस अवधि में मंजु और मनीष अपने कार्यों के सिलसिले में अक्सर ही मिलते-जुलते रहे थे किन्तु उसके सम्बन्धों में निकटता या घनिष्ठता फिर भी न आ पाई थी। मंजु के घर मनीष अपनी मोटर साइकिल से कुलश्रेष्ठ जी के साथ आया था। एक-डेढ़ घंटे में ही मनीष के नम्र और आत्मीयता भरे व्यवहार से वर्मा जी का पूरा परिवार ही न केवल परिचित हुआ अपितु प्रभावित भी। इसके बाद मनीष को मंजु के घर आने का कोई मौका न मिला।

×

×

लगभग एक साल बाद...

वर्मा जी का घर सादगी पूर्ण ढंग से सजा था, थोड़ी चहल-पहल से लगता था कोई कार्यक्रम होने वाला है। वास्तव में दूसरे ही दिन मंजु का 'आदर्श विवाह' होना था।

वर्मा जी बड़े वेचैन नजर आ रहे थे। दस हजार रु० में से चार हजार तो मंजु के खाते से निकल आए। वे सोचते थे छः हजार में पत्नी के गहने बिक जायेंगे किन्तु परेशानी यह थी कि वे चार हजार से अधिक में नहीं बिक पा रहे थे। शेष दो हजार कहाँ से लायें यही चिन्ता उन्हें सता रही थी। इसी ऊहापोह में दूसरा दिन भी आ गया और दोनानाथ जी अपने पुत्र एवं 'दहेज निवारण समिति' के कुछ कार्य कर्ताओं के साथ 'आदर्श-विवाह' करने आ घमके।

पूर्व में ही पहुँच चुके मनीष दुबे, कुलश्रेष्ठ बैंक के अन्य कर्मचारियों, वर्मा जी तथा प्रवेश के मित्रों ने दोनानाथ जी का स्वागत किया। शीघ्र ही दोनानाथ जी ने वर्मा जी से एकान्त में मिलने की इच्छा व्यक्त की। वे अपने पुत्र रवि के साथ वर्मा जी के घर अन्दर वाले कमरे की ओर पहुँचे। वर्मा जी ने उनका आशय समझते हुए अपने पास के कुल आठ हजार रु० देकर उनके पैर पकड़ लिए और असमर्थता व्यक्त करते हुए दो हजार बाद में शीघ्र ही चुका देने की प्रार्थना की। किन्तु दोनानाथ बड़े खिलाड़ी थे, बोले 'आप दो हजार की कह रहे हैं, मैं दो रुपए भी नहीं छोड़ सकता—आप एक प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं; क्या दो हजार भी नहीं जुटा सकते? बात खत्म होने से पूर्व ही रवि बोला 'जब रुपयों का इन्तजाम नहीं हुआ था तो शादी करने की ही-क्या जल्दी थी?'

जी पूरे सिद्धान्तवादी ठहरे। वे कब मानने वाले थे ? अन्ततः वर्मा जी ने एक घण्टे की छूट उनसे ली दो हजार का इंतजाम करने के लिए।

अब एक ही चारा शेष रह गया था, उनकी माँ के द्वारा दिया गया सोने का हार, जो मरने से पूर्व उन्होंने वर्मा जी को देकर कहा था 'बेटा मैं बहुत अभागि हूँ, बहू मैंने यह हार एक-एक पैसा बचाकर, अपना पेट काटकर बनवाया था। तू इसे मेरी तरफ से बहू को पहना देना। इसे सम्हाल कर रखना यही मेरी आखिरी याद है।' पत्नी से जब उन्होंने वह लिया तो दोनों फूट-फूटकर रो दिए। माँ के ये आखिरी शब्द जैसे उनके कानों में गूँज उठे हों। 'बेटा, यह मेरी आखिरी याद है।'

माँ की आखिरी याद आज वे बेचने जा रहे थे अपनी बेटी के वर की कीमत चुकाने के लिए। कौन जान सकता है उनकी व्यथा को ? कितने बापों को अपने कलेजे के टुकड़े-टुकड़े करके यह कीमत चुकानी पड़ती है। दहेज लेने वाले निर्लज्ज पुत्र विक्रोता क्या जानें ? चुल्लु भर पानी में क्यों नहीं डूब मरते धर्म और समाज के ठेकेदार, जो इस कुप्रथा को ज़िन्दा रखने में सहायक हैं। प्रगतिशीलता के दावेदार नौजवानों को तनिक भी लज्जा क्यों नहीं आती, जब अपने आपको पशुओं की तरह दहेज के बाजारों में बिकवाते हैं।

आखिर दो हजार तीन सौ रुपयों में वर्मा जी ने हार बेच दिया। शीघ्र ही आकर दो हजार रु० दीनानाथ जी को चुपचाप दे दिए। संस्कार की तैयारी पूरी हो चुकी थी। दीनानाथ जी के साथ आया पुरोहित यज्ञ वेदी के पास बैठा था। उसने दुल्हन को दुलाने का आदेश दिया। मंजु निकलकर बरामदे में आई। सभी चौंक उठे क्योंकि वह बिल्कुल सादा-परिधान में थी। वह आते से ही वर पक्ष की तरफ इशारा करते हुए बोली—'क्षमा कीजिये, हमारे यहाँ एक प्रथा है लड़की की गोद भरने की। अतः पहले आप कम से कम पाँच हजार रुपयों के गहनों से गोद भरिये तभी फेरे पड़ेंगे।'

सभी का मुँह आश्चर्य से खुला का खुला रह गया। दुल्हन के इस अप्रत्याशित व्यवहार की तो कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था। वर्मा जी भी स्तब्ध रह गए। दीनानाथ और रवि एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। तभी रवि अपने दुल्हापन पर गर्व करते हुए बोला—'हम प्रथाओं में विश्वास नहीं करते, इसीलिए आदर्श विवाह कर रहे हैं।'

'श्रीमान् जी, बीस हजार रुपये का दहेज चुपचाप एंठ लेना कहाँ का आदर्श है, यह तो बताइये ?'—मंजु ने तमाचा सा मारा।

रवि बोखलाया—'तुम्हें झूठा आरोप लगाते हुए शर्म नहीं आती, मैं ऐसी लड़की से शादी नहीं कर सकता।'

अब तो दीनानाथ गरज उठे 'अब यह शादी नहीं होगी—हम दुल्हा को वापिस ले जा रहे हैं' इतना कहकर वे अपने सापियों सहित उठ खड़े हुए।

वर्मा जी को तो काटो तो खून नहीं उनकी आँखों के सामने अन्धेरा छा गया। वे कुछ भी नहीं समझ पाए कि क्षणमात्र में यह क्या से क्या हो गया। वे तो बोल भी नहीं पा रहे थे।

दुल्हा भी बोला—'अब शादी हरगिज नहीं होगी।'

तभी कोने में से एक आवाज आई 'यह शादी होगी और अभी होगी'—आवाज मनीष की थी जो अब तक सब कुछ चुपचाप देख रहा था।

रवि फिर बोला—'जब मैं ही तैयार नहीं हूँ तो कैसे होगी ?'

मनीष ने कहा—'श्रीमान जी, आप चुप रहिए—शादी आप नहीं, मैं करूँगा यदि मंजु की स्वीकृति और वर्माजी की अनुमति मिली तो।'

इस वाक्य ने जैसे सभी की मूर्छा तोड़ दी। विस्मय और हर्ष से मंजु की आँखें फटी की फटी रह गयीं। फिर संमलकर बोली—

'मनीष...जी...आप...मुझसे...!'

'हाँ—मंजु, समाज के कलंक इन वेशर्म ढोंगी, अपने बेटों को बेचने वाले, या खुद बिकने वाले दहेजखोरों का मुँह काला करने हमें ही आगे आना पड़ेगा। दहेज जैसी अमानवीय कुप्रथा की समाप्ति भाषणों से नहीं, व्यवहार से होगी। किसी भी नौजवान को यह बर्दाश्त नहीं करना चाहिए जिसकी रगों में राम, कृष्ण, दयानन्द का खून बहता है और फिर इन नपुंसक लालचियों को पाठ पढ़ाना भी जरूरी है।' एक ही सांस में मनीष बोलता चला गया।

असीम प्रसन्नता से भरी मंजु ने अपने पिता जी की ओर जिज्ञासा भरी दृष्टि से देखा। वर्मा जी, जो अब तक ठगे जुआरी से चुपचाप खड़े थे...मंजु का आशय समझकर बोल पड़े—'मैं तुम दोनों को विवाह की अनुमति देता हूँ।' मंजु और चाहती भी क्या थी, उसने शीघ्र ही पास रखे फूलों के हार को उठाकर मनीष के गले में डाल दिया।

कुलश्रेष्ठ जी ने, जो आर्य समाजी थे और 'संस्कार विधि' की पुस्तक अपने बैग में डाल लाये थे, कण्ठ से 'ओ३म् स्वति नो इन्द्रः—' का स्वर फूट पड़ा। मनीष के मुँह से आवाज आई—'पत्नी त्वमसि धर्मणाऽहं गृह पति-स्तव।' सारा वातावरण जानन्द से भर उठा। प्रवेश और तृप्ति अपने नये 'जीजा जी' को एक टक देखे जा रहे थे खूशी से भरे। वर्मा जी ने सपलीक कन्यादान किया, मनीष को एक रुपया और नारियल देकर वर-वध को उपहार में केवल 'दयानन्द संस्थान' द्वारा प्रकाशित हिन्दी वेद भाष्य मिला कुलश्रेष्ठ जी की ओर से।

×

×

'किन्तु मन्दाकार यह कहने लगते हैं कि लड़की को

दुमरे दिन के 'दैनिक प्रभात' का प्रथम

## — पं० युधिष्ठिर मीसांसक

आर्यसमाज शताब्दी समारोह, दिल्ली में स्वीकृत

आर्यसमाज का १२-सूत्री कार्यक्रम

## खोदा पहाड़ निकली चुहिया

हमने अपने लेखों में आर्यसमाज शताब्दी समारोहों के विषय में अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि इन समारोहों से न आर्यसमाज को नई दिशा प्राप्त होगी, और न कोई पुरोगम। इनके ऊपर जो लाखों रुपया आयोजनता का लुटाया जा रहा है, उसका कोई लाभ नहीं। हाँ, इतना लाभ हो सकता है कि समारोहों के प्रत्येक कार्यक्रम में राष्ट्र-पति, उपराष्ट्रपति, प्रधान मन्त्री वा अन्य मन्त्रियों को बुला-बुलाकर भावी चुनावों में अपनी कुर्सी सही सला-मत् रखने में हमारे नेता संभवतः कृतकार्य हो जावें। हम जानते हैं कि हमारे इस प्रकार के लेखों से अनेक नेता-नामधारी वर्ग, अथवा आर्यसमाज के अन्दर रहकर स्वार्थ-साधन करने वाले दुःखी होते होंगे। सामान्य जनता भी, जो इन नेताओं के बहुकावे में आ जाती है, हमारे लेखों को अनगल प्रलाप मानती होगी, पर सत्य यह है कि नेता लोग जो शताब्दी समारोहों की बढ़ा-चढ़ाकर सफलता का ढोल पीटते हैं, वही इनकी असफलता का द्योतक है।

हम आर्यसमाज शताब्दी समारोह दिल्ली में स्वीकृत '१२-सूत्री कार्यक्रम' को छाप रहे हैं। वह इस प्रकार है—

### आर्यसमाज का १२-सूत्री कार्यक्रम

१—आर्यसमाज का अधिक से अधिक जनता के साथ सम्पर्क हो, और वह जो भी कार्यक्रम बनाए, वह केवल जन-कल्याणकारी और जनसेवा की भावना से ही बनाये।

२—समस्त आर्यसमाजें आर्यकुमार-सभाओं, आर्य वीर दल, एवं आर्य वीरांगना दलों का आयोजन करें।

३—जिसके विरुद्ध किसी भी प्रकार के भ्रष्टाचार व चरित्रहीनता का कोई आरोप हो, वह किसी भी आर्य-समाज का अधिकारी न बन सके।

४—महिलाओं को आर्यसमाज एवं प्रतिनिधि सभाओं के संगठन की कार्यकारिणी में अनिवार्य रूप से स्थान दिया जाय।

५—कोई भी आर्य किसी भी ऐसे विवाह में सम्मिलित न हो जिसमें अनियन्त्रित दहेज लिया जाय वा

में ही कराये जावें, और अधिकारी प्रत्येक प्रकार की सुविधायें प्रदान करें।

६—बरात में ५० से अधिक बराती न हों, और सजावट, आतिशबाजी, रोजनी आदि पर व्यर्थ खर्च न किया जाय।

७—भंगड़ा, नाच आदि में कोई आर्य सम्मिलित न हो, जो हो उसे आर्यसमाज से निष्कासित किया जाय।

८—जो आर्य नाम के साथ जाति-सूचक चिह्न का प्रयोग करते हैं, वह बन्द कर दें। उसके स्थान पर आर्य शब्द लगावें।

९—प्रत्येक आर्य परिवार अपने बच्चों के सभी संस्कार अनिवार्य रूप से करावे तथा जो व्यक्ति नियम-पूर्वक सन्ध्या हवन न करता हो, उसे किसी पद पर न रखा जाय।

११—प्रत्येक आर्यसमाज अपने उत्सव एवं विशेष अवसरों पर हरिजन भाइयों को विशेष रूप से बुलाकर सहभोज का आयोजन करे। उन्हें अपने सदस्य बनाकर समान स्तर पर लाने का अनिवार्य रूप से प्रयास करें, जिससे सामाजिक विषमता का समूल नाश किया जा सके।

१२—प्रत्येक आर्यसमाज को गुणकर्मानुसार अन्तर्जातीय विवाह कराने का आन्दोलन आरम्भ करना चाहिये।

इन-१२ सूत्रों में से २-१-१० का सम्बन्ध आर्यसमाज के साथ है, बाकी सभी प्रस्ताव वा उनकी भाषा सरकारी नेताओं के मस्तिष्क की उपज है। उदाहरण के लिये—

संख्या ३—भ्रष्टाचारी वा चरित्रहीन समाज का अधिकारी न बन सके। पाठक शब्दावली पर भी ध्यान दें। अधिकारी न बन सके, तो क्या सदस्य रहने दिया जाय? भ्रष्टाचार-निरोध सरकारी प्रोग्राम है, उसके अनुसार कोई भ्रष्टाचारी कर्मचारी कार्यरत नहीं रह सकता, उसी को यहाँ भी स्वीकार कर लिया है।

संख्या ४ का प्रस्ताव अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष के प्रोग्राम की झलक रख रहा है। क्या पहले महिलाएं अन्तरंग और कार्यकारिणी में नहीं हैं। वास्तव में तो स्त्री-आर्यसमाज की पृथक् कल्पना ही गलत है।

संख्या ५ भी दहेज उन्मूलनरूप सरकारी प्रोग्राम ही है। क्या पहले आर्यसमाज अनियन्त्रित दहेज देना ठीक मानता था?

संख्या ११ का प्रस्ताव भी सरकारी प्रस्ताव के अनुरूप है। इतना ही नहीं हरिजन शब्द का प्रयोग भी आर्यसमाज के सिद्धान्त के विपरीत है। आर्यसमाज तो जन्मना जातघात मानता ही नहीं, फिर हरिजन नामधारी कौन-सा जन्तु है? आर्यसमाज ने तो अछूत कहे जाने वाले अनेकों को संस्कृत वा वेद पढ़ाकर ब्राह्मण बना दिया। यह तो

छत्ती घटना

# विदूषकों

का

## विदूषक



लगभग सात सौ वर्ष पहले की बात है। जर्मनी के एक शहर में कुछ छोटे लड़के स्कूल से घर लौट रहे थे। उधर से वहाँ का राजा अपने साधियों सहित घोड़े पर सवार हो गुजरा। वच्चों ने राजा का अभिवादन किया और सड़क के किनारे खड़े हो गये। राजा ने लड़कों के पास थोड़ा रोका और हर लड़के को एक-एक सिक्का देकर कहा कि जाओ मिठाइयाँ खरीदकर खा लेना। सभी लड़के खुश होकर उन्हें धन्यवाद देने लगे। पर एक छोटे लड़के ने अपना सिक्का राजा को वापस करते हुए कहा, 'श्रीमान, मैं यह सिक्का नहीं ले सकता, क्योंकि पिताजी मुझे मारेंगे।' राजा ने आश्चर्य से इसका कारण पूछा। लड़के ने कहा, 'पिताजी कहेंगे कि तूने यह सिक्का कहीं से चुराया है।' राजा ने मुस्कराकर कहा, 'अपने पिता से कहना कि राजा ने यह सिक्का स्वयं अपने हाथ से दिया है, तब वे नहीं मारेंगे।' इस पर लड़का बोला, 'नहीं श्रीमान, वे कभी विश्वास नहीं करेंगे कि यह सिक्का आपने अपने हाथ से दिया है। वे कहेंगे कि राजा स्वयं देते तो थैली भर के देते, हमारे राजा इतने कंजूस नहीं हैं कि एक अकेला सिक्का दें।' यह सुनकर राजा और उस के साथी हँसने लगे। राजा ने अपनी थैली लड़के को पकड़ा दी और हँसते हुए कहा, 'जा, अब तेरा बाप विश्वास करेगा !'

यही बालक, जिस में नटखटपन और हँसी-मजाक जन्मजात गुण थे, आगे चलकर जर्मनी के अत्यन्त लोक-प्रिय विदूषक टिल ओएलेन स्पीगेल के नाम से विख्यात हुआ।

वह एक गरीब किसान का बेटा था। पिता ने उसे किसी प्रकार का काम सिखाने का बहुत प्रयत्न किया, पर वह तो दुनिया को हँसाने और मूर्ख बनाने के लिए ही पैदा हुआ था ! वह अत्यन्त निडर था और लोगों की बात पकड़ता था। एक बार उसने एक रोटी बनाने वाले के यहाँ नौकरी की। एक रात मालिक कहीं जाने वाला था, अतः उसने टिल से कहा कि आज तूम्हीं अकेले काम करना। टिल ने कहा कि आज मैं तो ऐसा करूँगा कि तुम सब मूर्ख बन जाओगे। मालिक ने कहा कि तू तो बस मूर्ख बन जाओगा। टिल ने कहा कि मैं तो ऐसा करूँगा कि तुम सब मूर्ख बन जाओगे। मालिक ने कहा कि तू तो बस मूर्ख बन जाओगा। टिल ने कहा कि मैं तो ऐसा करूँगा कि तुम सब मूर्ख बन जाओगे।

मालिक ने नाराज होकर कहा कि कुत्ते और बिल्लिय बनाना, और वह चला गया। दूसरे दिन जब मालिक आया तो उसने देखा कि अलमारियों पर कुत्ते और बिल्लियों की शक्ल की रोटियाँ सिकी रखी हैं।

टिल कहीं भी टिक कर काम न कर सका। सभी जगहों से निकाला जाता रहा। अंत में उसने 'दुनिया ठगिये मक्कर से, रोटी खाइये शक्कर से' का सिद्धांत अपनाया और संपूर्ण जर्मनी में घूमता रहा। एक बार वह किसी सराय में ठहरा था। उसका सब पैसा खत्म हो गया और वह इस स्थिति में नहीं था कि सरायवाले का हिसाब चुका सके। उसने शाम के भोजन के समय भोजन-कक्ष में उपस्थित लोगों से कहा, 'मेरे पास एक ऐसा घोड़ा है जिस के सिर के स्थान पर पूँछ और पूँछ के स्थान पर सिर है, यदि सभी लोग एक-एक सिक्का दें तो मैं आपको ऐसा घोड़ा दिखाऊँगा।' सभी व्यक्तियों ने उसे एक-एक सिक्का दिया और उसके साथ विचित्र घोड़ा देखने के लिए अस्तबल में गये। वहाँ उन्होंने देखा कि टिल के घोड़े पर तीन घुमाकर रखी हुई थी और लगाम मुँह के बजाय पूँछ में बँधी थी। कई लोगों को अपने मूर्ख बनाये जाने पर क्रोध भी आया, पर ज्यादातर हँसने लगे।

टिल कई देशों में गया। एक बार पोलैंड के राजा ने चतुराई की परीक्षा करने के लिए उसे राज दरबार में आमंत्रित किया। उस के राज-दरबार में दो अन्य विदूषक भी थे। राजा ने टिल से कहा कि यदि वह प्रतिस्पर्धा में इन दोनों को हरा देगा तो बहुत इनाम पायेगा। राजा ने तीनों विदूषकों से कहा कि वे अधिक से अधिक धन की कामना करें, जिस की इच्छा सब से अधिक होगी वही जीतेगा। एक विदूषक ने कहा, 'महाराज, सारे जंगलों की लकड़ियाँ काट कर कागज बनाया जाये और संपूर्ण समुद्र स्याही हो जाये और उस से जितनी अधिक से अधिक संख्या लिख पाऊँ उतना धन मुझे चाहिए।' दूसरे विदूषक ने कहा, 'महाराज, आकाश में जितने तारे हैं, जंगल में जितनी पत्तियाँ हैं, समुद्र में पानी की जितनी बूँदें हैं और बालू के जितने कण हैं। उतने किले और महल बनायें जायें और प्रत्येक में इतना धन हो जितना साँधी ने माँगा है।

राजा को विश्वास था कि टिल इस से बड़ी बात नहीं सोच पायेगा। उसने टिल से कहा कि अब तुम अपनी इच्छा व्यक्त करो। टिल ने कहा, 'महाराज, मैं पढ़ा-लिखा तो हूँ नहीं कि अपनी इच्छा संख्याओं में व्यक्त कर सकूँ। मैं तो सिर्फ इतना चाहता हूँ कि आप मुझे अपने दोनों विदूषकों का उत्तराधिकारी बना दें और तब इन्हें फाँसी पर चढ़ा दें। राजा सहित सभी दरबारी टिल की चतुराई पर अट्टहास करने लगे। उसे ही इनाम मिला।

एक बार दोला देने के अपराध में उसे फाँसी की

## नया वैदिक साहित्य

के लिए उपस्थित था। राजा ने उस की अंतिम इच्छा पूरी और कहा कि इस इच्छा के कारण मौत की सजा रद्द नहीं होनी चाहिए। टिल ने कहा, महाराज मैंने अपने जीवन में बहुतों को कष्ट दिया है, पर मरते समय मैं किसी को और कष्ट नहीं देना चाहता। मैं चाहता हूँ कि मैं स्वयं अग्नि हाथों अपने को फाँसी लगाऊँ। राजा ने उसकी इच्छा स्वीकार कर ली और अधिक से कहा कि फंदा उसे दे दे। टिल ने फंदा हाथों में लेकर कहा, 'महाराज, रस्सी खोल कर मुझे दिलावा दीजिए। जब कभी मुझ पर बहुत दुःख पड़ेगा मैं इसी रस्सी से फाँसी लगाकर मर जाऊँगा। मेरी फाँसी की सजा रद्द नहीं हो रही है, केवल कुछ वर्षों के लिए टल रही है।' राजा सहित सभी उपस्थित व्यक्ति उसकी चतुराई पर हँसने लगे और वह रस्सी लेकर चला गया।

टिल बहुत वर्षों तक जिया। अपने अंतिम काल में वह म्योलन नामक नगर में रहा। कहते हैं कि अपनी मृत्यु के समय भी वह शराब से बाज नहीं आया। उसने अपनी वसीयत में लिखा कि मेरी अंत्येष्टि नगरपालिका की ओर से की जाये। जितना धन उसमें खर्च हो, मेरी संपत्ति में से नगरपालिका ले ले और शेष धन मेरी अंत्येष्टि में सम्मिलित होने वाले मित्रों में बाँट दिया जाये। यह बंटवारा मेरी मृत्यु के ठीक एक महीने बाद किया जाये। अपनी तिजोरी वह सदैव अपने पलंगके नीचे रखता था। उस की मृत्यु सन् १३५० ई० में हुई। नगरपालिका ने अत्यंत धूमधाम से उसकी अंत्येष्टि कराई तथा उसका संगमरमर का स्मारक भी बनवाया। धन के लालच में बहुत से लोग उसकी अंत्येष्टि में सम्मिलित हुए।

एक महीने बाद जब उसका संदूक खोला गया तो उसमें केवल पत्थर भरे हुए थे। नगरपालिका के पास उसके 'धन' का उपयोग करने का एक ही उपाय बचा। उसने नगर के चौक बाजार में उन पत्थरों से सड़क पटवा दी।

विद्व छात्र संघ का अधिवेशन १९२७ में मेसूर में हुआ था। अमरीकी नेता रेवरेंड मॉट उसके अध्यक्ष थे। उन्होंने बापू से मिलने का समय चाहा। बापू बड़े व्यस्त थे, अतः उन्होंने सोने से पूर्व दस मिनट का समय उन्हें दे दिया। अभिवादन के उपरांत रेवरेंड मॉट ने पूछा, 'कौन-सी ऐसी चीज है जो आप को सर्वाधिक आशावान बनाती है?'

बापू मुस्कुराये और बोले, 'कितनी ही छेड़छाड़ होने पर भी यहाँ के लोगों के मन में अहिंसा की वृत्ति नहीं जाती है, यह देखकर मुझे बहुत आशा होती है।'

'कौन-सी ऐसी चीज है जिस से दिन-रात आप चिंतित रहते हैं?'

### १. धरती का स्वर्ग : गृहस्थाश्रम

लेखक—श्री पं० शिवकुमार शास्त्री, काव्य-व्याकरण तीर्थ, संसद् सदस्य। मूल्य १)५०

पं० शिवकुमार जी शास्त्री आर्यसमाज के पुराने महोपदेशक रहे हैं। पिछले ३० वर्षों के अपने अनुभवों को उन्होंने "धरती का स्वर्ग" नामक पुस्तक में प्रस्तुत किया है।

गृहस्थाश्रम को कैसे स्वर्ग बनाया जाए? इस विषय में शास्त्री जी का मार्गदर्शन सभी के जीवन को नयी प्रेरणा देने में समर्थ है।

पुस्तक का मूल्य लागत मात्र १)५० है।

### २. वैदिक गृहस्थाश्रम

पं० विश्वनाथ विद्यामार्तण्ड की महान् कृति : विवाह पर भेंट के लिए। कपड़े की जिल्द मूल्य ६)

### ३. धर्म का सार

स्व० पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय लिखित यह पुस्तक प्रचार के लिए अत्यन्त उपयोगी है। साधारण व्यक्तियों को समझाने के लिए इसे ६ कथाओं में प्रस्तुत किया गया है। मूल्य १), किन्तु १०० मंगाने पर ६५) सैंकड़ा

### ४. महान् दयानन्द मूल्य १)५० १००) सैंकड़ा

महर्षि दयानन्द को विभिन्न दृष्टिकोणों से देखते हुए पं० शिवदयालु जी ने इस अनमोल पुस्तक में प्रस्तुत किया है।

### ५. आदर्श परिवार — मूल्य ६० पैसे। ४०) सैंकड़ा

राजस्थान के भूतपूर्व मंत्री श्री युगलकिशोर द्वारा लिखित यह पुस्तक प्रचार व विवाह आदि पर बांटने के लिए विशेष उपहार है।

### ६. प्रभु के चरणों में

मूल्य १.५०।

प्रसिद्ध विद्वान् पं० हरिहरण जी द्वारा सामवेद के कुछ मंत्रों की सरल व्याख्या प्रार्थना रूप में प्रस्तुत की गयी है। मंत्रों को पढ़ते हुए साधक भाव विभोर हो जाता है।

### ७. वन्दना के स्वर

मूल्य ८)

संपादक—श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन'

डीलक्स संस्करण

१५)

अधिक से अधिक मंगाएं : बांटे

# आर्य जगत् के समाचार

(शेष पृष्ठ १५ का)

—आर्यसमाज मुरसान द्वारा हाथरस का वार्षिकोत्सव १५-१६-१७ मई को मनाया गया।

—डा० दिलीप वेदालंकार विदेश यात्रा पर

गुजरात प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री एवं अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त उत्साही नवयुवक वैदिक मिशनरी डा० दिलीप जी वेदालंकार एम० ए०, पी एच० डी० ६ मई को अरब देशों में प्रचार रवाना हो गये हैं।

आर्य समाज उन्नाव का वार्षिकोत्सव

उन्नाव आर्य समाज, उन्नाव का ७८वाँ वार्षिकोत्सव २५-२६ व २७ अप्रैल को सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर श्री शिव मुनि जी परिव्राजक, पं० राम दयाल शास्त्री, पं० सत्यमित्र शास्त्री, पं० विद्याधर जी, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश आदि के उपदेश हुए। कुँवर भद्रपाल, श्री धर्मदत्त 'आनन्द' व श्री जलेश्वर सिंह के भजन भी हुए। सभा प्रधान पं० विद्याधर जी को माल्यार्पण करके उनका स्वागत किया गया।

—आर्यसमाज भाण्डुप

(बम्बई) के चुनाव में श्री रणवीर कुमार प्रधान श्री त्रिभुवन सिंह मन्त्री और श्री बी० डी० गुप्त कोषाध्यक्ष चुने गये।

—दिनांक २-५-७६ को सत्य नारायण 'विजय' स्नातक मन्त्री आर्य समाज गंगा जमुनी के संरक्षण व निर्देशन में ग्राम पूरे बदल (गोंडा) में यज्ञ व सत्संग का आयोजन किया गया जिसमें ग्राम के सभी संध्रान्त लोगों ने उपस्थित होकर यज्ञ व सत्संग से लाभ उठाया। उक्त अवसर पर ग्राम सभा पूरे बदल में नवीन आर्य समाज का संगठन किया गया। सर्व सम्मति से निम्न लोग चुने गये—

प्रधान—श्री ऋषिराम आर्य 'सरल'

मन्त्री—श्री रामरूप आर्य विद्यावाचस्पति

कोषाध्यक्ष—श्री लाल बिहारी आर्य

—गुरुकुल ज्वालापुर के स्नातक एवं गवाँ समाज के भूतपूर्व अधिकारी के पिता जी का लम्बी बीमारी के बाद २६-१-७६ को उनके ज्येष्ठ पुत्र डा० ओम प्रकाश शर्मा के पास कर्णवास (बलन्दशहर) में देहान्त हो गया। अंत्येष्टि वैदिक विधि से हुई।



२५०) सैकड़ा का

सत्यार्थ प्रकाश बांटें

पुत्र रवि वर्मा के साथ दहेज में दस हजार रुपये ऐंठते रंगे हाथों पुलिस द्वारा गिरफ्तार।' बगल का समाचार था— 'मंजु वर्मा और मनीष दुबे नई पीढ़ी के अनुकरणिय उदाहरण।' × ×

दस हजार रुपये तो दीनानाथ जी से पुलिस ने प्राप्त कर ही लिए थे। फलदान के पिछले दस हजार के लिए पुलिस के सामने उन्होंने साफ इन्कार कर दिया। फिर भी पुलिस उनके पीछे पड़ी ही थी वे रुपये भी उन्हें वापस करने पड़े, पर दूसरी तरह क्योंकि दहेज निवारण समिति के अन्य कार्य कर्ताओं के प्रयास से उन्हें पूर्ण सामाजिक बहिष्कार का भय था साथ ही ये कार्य-कर्ता उन्हें कभी भी पकड़कर काला मुँह करके गधे पर बँठाकर नगर में घुमाने की धमकी भी दे चुके थे। बेचारे या बेगम दीनानाथ—। × ×

आज समाज में कितने 'वर्मा जी' अपनी बेटियों के दहेज के लिए अपने कलेजे के टुकड़े-टुकड़े करके पत्नी के गहने बेचते हैं या कर्ज में डूब मरते हैं। कितने प्रवेशों को अपनी बहनों के दहेज के लिए जिन्दगी तबाह करनी पड़ती है। आज भी कितने 'दीनानाथ' और 'रवि वर्मा' जैसे दहेज खोर शान से समाज में जीते हैं दहेज में भारी रकम बसूल करके जरा आत्म निरीक्षण करें हम में से कौन किस श्रेणी में आता है?

आज हमारा समाज, हमारा राष्ट्र मनीष चाहता है, हमारी बिरादरी मंजु चाहती है, पर बन कौन पाता है?

काश ! कहानी का कोई पाठक मनीष बन सके और कोई पाठिका मंजु !

२८-२९-३० मई को रोहतक में  
विशाल शताब्दी समारोह

संपन्न होगा।

सारे काम छोड़कर

२८ की प्रातः रोहतक पहुँचिए।

लालबहादुर शास्त्री केंद्रीय गृह-मंत्री थे। उस समय उनके निवास-स्थान का एक दरवाजा जनपथ की ओर था और दूसरा अकबर मार्ग पर। एक बार दो मजदूर स्त्रियाँ सिर पर बोझ लेकर उस रास्ते से निकलीं तो चौकीदार ने उन्हें घमकाना शुरू किया। घर में बैठे शास्त्रीजी ने सुना और तुरन्त बाहर आकर पूछा, 'क्या बात है?' चौकीदार ने बात बतायी। शास्त्रीजी ने कहा, 'भाई, देखो तो सही कि इनके सिर पर कितना अधिक बोझ है! यदि ये नजदीक का रास्ता

(पृष्ठ ६ का शेष)

ईश्वर को पुरुष से पूर्ण समझा है। इस भूल की विवेचना हम पहिले कर चुके हैं। तिलक की कल्पित आर्या में ईश्वर, काल और स्वभाव को एक साथ रखकर इनकी उपादानता का निषेध किया गया है। आश्चर्य यह है कि ईश्वर को सृष्टि का उपादान कारण न स्वीकार करने से सांख्य पर नास्तिकता का दोष कैसे आता है? किसी भी आस्तिक दर्शन (न्याय, वैशेषिक, योग, मीमांसा व वेदान्त) ने ईश्वर को सृष्टि का उपादान कारण नहीं माना है, फिर भी उनको निरीश्वरवादी नहीं कहा गया है। तो फिर इसी आधार पर सांख्य को निरीश्वरवादी क्यों कहा जाये? इसलिए तिलक द्वारा सांख्य पर नास्तिकता का दोषारोपण करना सर्वथा अनुचित एवं असंगत है।

सांख्य पर नास्तिकता के मिथ्यारोपों का निराकरण करने के उपरान्त हम यह सिद्ध करना चाहते हैं कि यह एक परम आस्तिक दर्शन है। 'नास्तिको वेदनिन्दकः' वेद की निन्दा करने वाला नास्तिक और उसे प्रामाणिक मानने वाला आस्तिक कहलाता है। न्याय, वैशेषिक, योग, मीमांसा व वेदान्त की भांति सांख्य भी वेद को प्रामाणिक स्वीकार करते हुए उसको अपौरुषेय ईश्वरीय ज्ञान मानता है। इसके समर्थन में हम सांख्य दर्शन से कुछ सूत्र उद्धृत करते हैं:—

न पौरुषेयत्वं तत्कर्तुः पुरुषस्याभावात् ॥१४७॥

अर्थ—उसकी रचना करने वाले पुरुष के न होने से वेद पौरुषेय नहीं है। अर्थात् वेद की रचना करने वाला कोई पुरुष नहीं है।

न मुक्तामुक्तयोरयोग्यत्वात् ॥५-४७॥

अर्थ—मुक्त और अमुक्त (बद्ध) जीव भी अल्पज्ञ, अल्पशक्ति होने से वेद के कर्त्ता नहीं हो सकते।

निजज्ञवत्यभिव्यक्तेः स्वतः प्रामाण्यम् ॥१-५१॥

अर्थ—निज शक्ति से अभिव्यक्त होने के कारण वेद का स्वतः प्रामाण्य है।

पष्ठोऽध्यायं में इस प्रश्न का कि जीवात्मा भवचक्र से कैसे छुटकारा प्राप्त कर सकता है, सूत्रकार कहता है—

पारम्पर्येण तत्सिद्धौ विमुक्तिश्चुतिः ॥६-५८॥

अर्थ—परम्परा से विवेक की सिद्धि होने पर मोक्ष वेद प्रमाणित है। मोक्ष के सम्बन्ध में यहाँ वेद की प्रामाणिकता को स्वीकार किया गया है।

यहाँ एक बात विचारणीय है। सभी आस्तिकों ने यह स्वीकार किया है कि वेदों का प्रकाशक वा रचयिता परमेश्वर ही है। सांख्य ने वेदों की प्रामाणिकता को स्पष्टतः स्वीकार किया है। इस स्थिति में वेद की प्रामाणिकता को स्वीकारते हुए सांख्य द्वारा ईश्वर की सत्ता का निराकरण ऐसा ही असंगत एवं हास्यास्पद होगा जैसा कि 'रामचरितमानस' को प्रामाणिक मानते हुए तुलसीदास की सत्ता को अस्वीकार करना।

पात पूर्ण है। आधुनिक समय के महान् दार्शनिक महर्षि दयानन्द जी के शब्दों में 'जो कोई कपिलाचार्य्य को अनीश्वरवादी कहता है जानो वही अनीश्वरवादी है, कपिलाचार्य्य नहीं।' ★

(पृष्ठ १० का शेष)

'ओ हो। भाई सदानन्द! यह तो हमने था नहीं विचारा। हमने तो सुने थे उनके दहेज विरोधी भाषण घुआंधार। हमें क्या पता था कि ये समाज सुधारक जी महाराज जो सामाजिक संगठन में भी बड़े ऊँचे पदाधिकारी हैं और पैसे से नहीं व्यापारी हैं दरअसल करने को पुत्रों का व्यापार। रहे थे मन में योजनाएं धार, करके सोच विचार। दहेज विरोधी व्यवस्थाओं से हो गई है इनकी योजनाएं फेल। इसीलिए आजकल रुक गई है इनकी वाणी की भी तूफान मेल। धन्यवाद श्री सदानन्द! आपने बना दिया है हमें अपनी कुशाग्र बुद्धि की तीक्ष्णता को मानने का पावंद। शर्मा जी के दुखड़े और उखड़े-उखड़े मुखड़े का रहस्य आपने दिया है खोल। इसी कारण से उनका सेव सा मुखड़ा बन गया है छुहारा। किन्तु प्रभु से एक ही विनय है हमारी। ऐसे जो है पुत्रों के व्यापारी उन्हें देवे वह विवेक और सद्विचार ताकि उनकी कथनी व करनी के अंतर का हो जाए उपसंहार।

—दिग्दर्शनानन्द

अब थोड़ा हँस लीजिए

मित्र को भोजन के लिए निमन्त्रित किया था लक्ष्मी बाबू ने। भोजन के समय उनके पुत्र ने पूछा, "उस कटोरे में क्या खीर है, पिताजी?"

"हाँ बेटे" लक्ष्मी बाबू ने लाड़ से कहा।

"पिताजी, आप सुबह अम्मां से कह रहे थे कि आज रात एक पेटू खाने आयेगा, उसके लिए खीर जरूर बनाना। क्या ये पेटू ही सारी खीर खा जायेंगे, हमें नहीं मिलेगी?"

(पृष्ठ १२ का शेष)

'की थी! किन्तु कट्टर मजहबवादी होने के कारण उन लोगों का बड़ा प्रभाव है। किसी ने उनसे कुछ भी नहीं कहा। वह पुरबिया जवान नौकरी छोड़कर ही चला गया। बड़ा अच्छा तोरची था वह। किसी यूरोपियन से सीखी थी उसने यह कला, केवल सिखों की स्वदेशी सेना में रह कर अपनी योग्यता का प्रदर्शन करने के लिए ही वह इस सेना में भर्ती हो गया था।

जोरावरसिंह के नेत्रों में लावे जैसी चमक उभर उठी। वह बोल उठा, 'जिस दिन मेरे साथ ऐसी घटना हुई, उस दिन मैं देख लूँगा। किन्तु मैं यही मानता हूँ कि न तो सिख गुरुओं का मत हमसे पृथक् है और न उनके शिष्य ही। हिन्दू और सिखों में फूट की भावनाओं को बर्तना नहीं चाहिए।'



२—यो विद्यात्... ब्रह्म प्रत्यक्षम् ॥ अथर्व १।६।१॥

अर्थ—(यः) जो समाधिस्थ योगी महात्मा (ब्रह्म) ईश्वर को (प्रत्यक्ष) प्रत्यक्ष=साक्षात् (विद्यात्) जानता है ॥ इसी कारण ऋषि दयानन्द ने लिखा है कि जीव और ईश्वर का विज्ञान गुण द्वारा होता है। इस बात को 'विद्यात्' क्रिया स्पष्ट करती है।

३—वेदाहमेतं पुरुषमादित्यवर्णम् ॥ यजु० ३१। १८॥

अर्थ—(अहम्) ईश्वरोपासक मैं (आदित्यवर्णम्) अखण्ड ज्ञान प्रकाश स्वरूप (एतम्) इस प्रत्यक्ष (पुरुषम्) सर्वान्तर्यामी सर्वव्यापक परमात्मा को (वेद) जानता हूँ। 'एतद्' पद से ईश्वर की प्रत्यक्षता सुलक्षित है।

४—यस्तु सर्वाणि भूतान्यत्मन्येवानुपश्यति ॥ यजु० ४०।६

अर्थ—(यः) जो तत्त्वदृष्टा वैज्ञानिक योगी पुरुष (सर्वाणि-भूतानि) सम्पूर्ण चर-अचर जगत् को (आत्मनि एव) परमेश्वर में ही व्याप्य रूप से स्थित (अनुपश्यति) अपने आत्मा सहित साक्षात् करता है। "अनुपश्यति" से स्पष्ट है कि प्रकृति, जीव और ईश्वर तीनों को जीव प्रत्यक्ष करता है।

### उपनिषद्-वचन

ब्रह्म का साक्षात्कार=प्रत्यक्ष प्रतिपादन करने वाले आप्य ग्रन्थों में उपनिषदों का स्थान बहुत ऊँचा है। इन में स्थल के स्थल इस विषयक भरे हुए हैं। साक्षी रूप केवल एक प्रमाण दिया जाता है—

१—त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि ॥ तै० उप०

अर्थ—हे परमेश्वर ! (त्वम्-एव) तू ही (प्रत्यक्ष) प्रत्यक्ष रूप (ब्रह्म) सब से महान् (असि) हो। यहाँ प्रत्यक्ष पद का प्रयोग प्रत्यक्ष ही है।

### शङ्का-समाधान

प्रश्न—पृथिवी आदि पदार्थों में रूपादि गुण होते हैं, अतः चक्षु आदि इन्द्रियों से गुणों का ग्रहण होकर पृथिवी आदि गुणों का प्रत्यक्ष हो सकता है, परन्तु ईश्वर में रूपादि गुण न होने से उसका प्रत्यक्ष नहीं हो सकता।

उत्तर—श्रोत्र, त्वचा, चक्षु, जिह्वा और घ्राण पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। इन को ज्ञान के बाह्य करण कहा जाता है, क्योंकि इनसे शब्दादि बाह्य गुणों का प्रत्यक्ष किया जाता है। मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार को अन्तःकरण कहते हैं, क्योंकि इनसे सुखादि आन्तरिक गुणों का प्रत्यक्ष होता है। इन चारों को एक नाम मन से भी कहा जाता है। त्वचा आदि बाह्य इन्द्रियों से आन्तरिक गुणों=सुख-दुःख, संकल्प-विकल्प, सत्य-असत्य आदि का ग्रहण नहीं हो सकता, इसीलिए अन्तःकरण मन की भी

जाता है, केवल धर्म भेद होने से पृथक् ग्रहण किया जाता है। न्याय सूत्र में प्रत्यक्ष प्रमाण के लक्षण में 'इन्द्रिय' पद से बाह्य और अन्तः दोनों करणों=त्वचा आदि पाँच ज्ञानेन्द्रिय और मन का ग्रहण होता, इसीलिए मन शब्द का पृथक् वर्णन सूत्र में नहीं है। सुख, दुःख आदि आन्तरिक गुणों के प्रत्यक्ष को मानस प्रत्यक्ष कहा जाता है। ईश्वर के रचना विशेष, ज्ञानादि गुणों का भी मानस प्रत्यक्ष करके परमेश्वर का प्रत्यक्ष होता है। जीव और ईश्वर के प्रत्यक्ष को आत्मप्रत्यक्ष भी कह सकते हैं।

प्रश्न—ऋषि दयानन्द ने लिखा है "इस सृष्टि में परमात्मा की रचना विशेष लिङ्ग-देख के परमात्मा प्रत्यक्ष होता है।" इस वाक्य में "लिङ्ग" पद के प्रयोग से यह प्रकट होता है कि लिङ्ग द्वारा लिङ्गी का ज्ञान अनुमान प्रमाण का विषय है, प्रत्यक्ष प्रमाण का नहीं। अतः परमात्मा के रचना विशेष का ज्ञान लिङ्ग से परमात्मा लिङ्गी का अनुमान होता है, प्रत्यक्ष नहीं, जैसे घड़ी से घड़ीसाज का अनुमान होता है। घड़ी लिङ्ग है और घड़ीसाज लिङ्गी।

उत्तर—यह ठीक है कि लिङ्ग से ही लिङ्गी का अनुमान होता है, परन्तु यह अनिवार्य नहीं कि अनुमान ही हो, किन्तु लिङ्ग से प्रत्यक्ष भी होता है। जैसे किसी ने पूछा कि रामसिंह का मकान कौन सा है। उत्तर देने वाले ने कहा कि वह सामने वाला मकान, जिस पर "ओम्-पताका" फहराती है, रामसिंह का ही है। यहाँ ओम् पताका लिङ्ग है और रामसिंह का मकान लिङ्गी है। पूछने वाले को दोनों प्रत्यक्ष हैं। पूछने वाले को "रामसिंह का मकान यही है"—इतना ही जानना था, जिसका ज्ञान उसको पताका से हो गया। लिङ्ग के पर्यायवाची शब्द लक्षण 'चिह्न, अनुमान, हेतु, कारण, बीज, निदान आदि हैं। इस उदाहरण में लिङ्ग से अभिप्राय चिह्न का है। पताका चिह्नित मकान प्रत्यक्ष है। अतः लिङ्ग द्वारा ज्ञान की प्राप्ति में अनुमान और प्रत्यक्ष दोनों प्रमाण रहते हैं। इसमें कुछ विवाद नहीं। अब घड़ी लिङ्ग और घड़ीसाज लिङ्गी के उदाहरण को लीजिए। इस उदाहरण के भी दो रूप हैं। (१) घड़ीसाज घड़ी को बनाकर बाजार में बेच देता है, तब प्रत्यक्ष लिङ्ग घड़ी को देखकर, अप्रत्यक्ष लिङ्गी-निमित्त कारण-घड़ीसाज का अनुमान प्रमाण से बोध होता है, क्योंकि लिङ्ग घड़ी और लिङ्गी

साज घड़ी को बना रहा है, तब प्रत्यक्ष लिङ्ग घड़ी से प्रत्यक्ष निमित्त कारण घड़ीसाज का प्रत्यक्ष प्रमाण से बोध होता है, क्योंकि दोनों एक साथ हैं। अतः लिङ्ग शब्द के प्रयोग मात्र से प्रत्यक्ष प्रमाण का मार्ग बन्द नहीं हो जाता। जैसे घड़ी की प्रत्यक्ष रचना को करते हुए देखकर घड़ीसाज को भी प्रत्यक्ष करता है। इसी भान्ति सृष्टि लिङ्ग और निमित्त कारण ईश्वर लिङ्गी है। इसमें भी दोनों प्रमाण, अनुमान और प्रत्यक्ष, काम में आते हैं। सृष्टि की रचना बाह्य कार्य को प्रत्यक्ष देख कर निमित्त कारण ईश्वर का अनुमान होता है, क्योंकि ईश्वर का बाह्य प्रत्यक्ष नहीं होता—अर्थात् जैसे सृष्टि कार्य को चक्षु आदि बाह्य इन्द्रियों से प्रत्यक्ष करते हैं वैसे ईश्वर को बाह्य इन्द्रियों से प्रत्यक्ष नहीं कर सकते, क्योंकि ईश्वर में बाह्य इन्द्रियों से ग्रहण होने वाले रूपादि गुण नहीं हैं, अतः वह अनुमान प्रमाण का विषय है। इस अवस्था में ईश्वर के गुणों के साथ आन्तरिक सम्बन्ध नहीं है। दूसरी अवस्था में सृष्टि की रचना विशेष ज्ञानादि गुणों का जब जीव आन्तरिक रूप में मानस प्रत्यक्ष करता है, तब ईश्वर का भी प्रत्यक्ष होता है क्योंकि गुण और गुणी का नित्य सम्बन्ध होने से दोनों एक जगह हैं। ईश्वर के रचना विशेष ज्ञान गुण से गुणी ईश्वर का अव्यवहित सम्बन्ध है। ईश्वर सर्वव्यापक और सर्वान्तर्यामी है, अतः इस उदाहरण में ईश्वर अप्रत्यक्ष नहीं, किन्तु प्रत्यक्ष है। सार यह है कि कार्य रूप जगत् लिङ्ग के बाह्य प्रत्यक्ष से निमित्त कारण ईश्वर लिङ्गी का अनुमान होता है और जगत् की रचना विशेष ज्ञान गुण लिङ्ग के मानस प्रत्यक्ष होने से निमित्त कारण ईश्वर—लिङ्गी का (गुण से अव्यवहित गुणी के नियम द्वारा) प्रत्यक्ष प्रमाण से साक्षात् हो जाता है।

**प्रश्न**—लिङ्ग से लिङ्गी ज्ञान को सब दार्शनिकों ने अनुमान प्रमाण का विषय माना है, जैसे घूम लिङ्ग से अग्नि लिङ्गी का अनुमान किया जाता है।

**उत्तर**—इस प्रश्न का उत्तर यद्यपि पूर्व प्रश्न के उत्तर में आ चुका परन्तु पुनः स्पष्ट करते हैं। जब लिङ्ग और लिङ्गी दोनों द्रव्य होते हैं और उन दोनों में समवाय सम्बन्ध न हो, तो लिङ्ग द्रव्य से लिङ्गी द्रव्य का अनुमान होता है, परन्तु इसमें भी लिङ्ग द्रव्य और लिङ्गी द्रव्य की व्याप्ति का ज्ञान भी होना अनिवार्य है। हम बार-बार भोजनशाला में देखते हैं कि

रहते हैं। जब हमें अन्यत्र भी घूम उठता हुआ दिखाई देता है, तब हम घूम लिङ्ग के प्रत्यक्ष और घूम और अग्नि की व्याप्ति—सहचार सम्बन्ध के ज्ञान की स्मृति से दूर अप्रत्यक्ष अग्नि का अनुमान कर लेते हैं। यह एक पक्ष हुआ। दूसरा पक्ष आगे दिया जाता है। जब लिङ्ग गुण होता है और उस गुण से अव्यवहित गुणी लिङ्ग द्रव्य होता है, तब गुण के प्रत्यक्ष होने पर गुणी का भी प्रत्यक्ष होता है। जैसे पृथिवी गुणी लिङ्गी द्रव्य के लिङ्ग गुण रूपादि के प्रत्यक्ष होने पर पृथिवी गुणी का प्रत्यक्ष होता है वैसे ही सुख-दुःख गुण लिङ्ग के प्रत्यक्ष होने पर गुणी लिङ्ग जीव का प्रत्यक्ष होता है और सृष्टि की रचना विशेष ज्ञानादि के प्रत्यक्ष होने पर गुणी लिङ्गी ईश्वर का प्रत्यक्ष होता है। बाह्य गुणों का इन्द्रिय प्रत्यक्ष और आन्तरिक गुणों का मानस प्रत्यक्ष होकर गुण से अव्यवहित गुणी का प्रत्यक्ष होता है। जिस द्रव्य में ज्ञान, सुख, सत्यादि आन्तरिक गुण नहीं होते और रूप, स्पर्श आदि बाह्य गुण होते हैं, उन बाह्य गुणों का इन्द्रिय प्रत्यक्ष होकर गुणों से अव्यवहित गुणी का प्रत्यक्ष हो जाता है। जैसे प्राकृतिक पदार्थों का प्रत्यक्ष। जिस द्रव्य में बाह्य गुण रूपादि नहीं होते और आन्तरिक गुण ज्ञानादि होते हैं, तब उन गुणों का मानस प्रत्यक्ष होकर उन आन्तरिक गुणों से अव्यवहित गुणी द्रव्य का प्रत्यक्ष हो जाता है। इसी प्रत्यक्ष को आत्मप्रत्यक्ष भी कहा जाता है, जैसे जीव और परमेश्वर का प्रत्यक्ष। अतः लिङ्ग से लिङ्गी का ज्ञान केवल अनुमान का ही विषय नहीं, किन्तु प्रत्यक्ष प्रमाण का विषय भी है।

### विशेष-ज्ञातव्य

अनुमान प्रमाण प्रत्यक्ष प्रमाणपूर्वक ही होता है। न्याय दर्शन १।१।५ में अनुमान प्रमाण का लक्षण यह दिया है—

अथ तत्पूर्वकं त्रिविधमनुमानं

पूर्ववच्छेषवत्सामान्यतो दृष्टञ्च ॥

इसके अर्थ में ऋषि दयानन्द लिखते हैं—“जो प्रत्यक्षपूर्वक अर्थात् जिसका कोई वा सम्पूर्ण पदार्थ किसी स्थान वा काल में प्रत्यक्ष हुआ हो उसका दूर देश के प्रत्यक्ष होने से अदृष्ट अवयवी का ज्ञान होने को अनुमान कहते हैं।”—३ समु०

जब हम बार-बार रसोई आदि में घूम और अग्नि को एक जगह देख कर यह निश्चय करते हैं कि जहाँ घूम उठता दिखाई देवे, यहाँ अग्नि अवश्य होता है हम जब

तब धूम और अग्नि की व्याप्ति—सहचार सम्बन्ध की स्मृति हो जाती है और धूम दर्शन तथा धूम-अग्नि की व्याप्ति स्मृति से अदृष्ट अग्नि का अनुमान कर लेते हैं। इस उदाहरण में व्याप्ति विशिष्ट धूम लिंग का प्रत्यक्ष होना अनिवार्य है, अतः अदृष्ट लिंगी अग्नि का दृष्ट लिंग धूम से अनुमान हो जाता है। इसलिए अनुमान प्रमाण को तत्पूर्वक—प्रत्यक्ष पूर्वक कहा जाता है। यदि हमें पूर्व ही धूम-अग्नि के व्याप्ति सम्बन्ध का ज्ञान प्रत्यक्ष रूप में न होवे तो धूम को देख कर भी अदृष्ट अग्नि का अनुमान नहीं हो सकता। अनुमान प्रमाण में व्याप्ति-ज्ञान पूर्वक ही लिंग ज्ञान कारण होता है। यह लिंग ज्ञान प्रत्यक्ष प्रमाण का विषय है, इस लिए अनुमान का विषय प्रत्यक्ष प्रमाण पूर्वक ही होता है। इसी से ईश्वर द्वारा रचित सृष्टि रूप लिंग कार्य को प्रत्यक्ष करके लिंगी ईश्वर का अनुमान होता है। सामान्यतोदृष्ट का यह उदाहरण है।

परन्तु गुणों के प्रत्यक्ष द्वारा गुणों से अव्यवहित गुणी का ज्ञान अनुमान का विषय नहीं है, किन्तु प्रत्यक्ष का विषय है। क्योंकि गुण और गुणी का सम्बन्ध अविनाभाव रूप—समवाय—नित्य—अयुतसिद्धवृत्ति होता है।

यदि ईश्वर के गुणों का प्रत्यक्ष किसी भी व्यक्ति को कहीं भी, किसी भी काल में न होवे, तो ईश्वर का अनुमान भी नहीं हो सकता। ईश्वर के गुणों के प्रत्यक्ष से ईश्वर का प्रत्यक्ष उपर्युक्त हेतुओं से सिद्ध है।

प्रमाणों की पूर्ति प्रत्यक्षपरा है। पदार्थ के प्रत्यक्ष हुये बिना जिज्ञासा की शान्ति नहीं हो सकती। अतः ईश्वर की प्रत्यक्ष प्राप्ति से ही मानव ज्ञान की पूर्ति हो सकती है।

## गीत

## इन्सान कौन है ?

वही इंसान है इंसान से जो प्यार करता है।  
दया से दिल भरा रहता है पर-उपकार करता है॥  
मुसीबत में भी जो हरदम ही रहता मुस्कराता है।  
जो हरआफत का हिम्मत से सदा संहारकरता है॥  
तरबकी देख गैरों की खुशी से भूम जाता जो।  
जहाँ तक हो सके पतितों का जो उद्धार करता है॥  
नहीं करता है जालिम का कभी सम्मान डरकर जो।  
मगरसज्जन का जो हरदमबहुतसत्कार करता है॥  
ईमानदारी, वफादारी, शराफत जिसकी आदत में।  
सदाकृत के वसूलों पर सदा इतबार करता है॥  
शराफत का धनी है जो सहारा बेसहारों का।  
भंवर में है अगर किशती किसकी, पार करता है॥  
समझकर सोचकरबायदा हमेशा जो किया करता।  
वो करता है उसे पूरा कि जो इक्रार करता है॥  
जो मन्दिर और मस्जिद में कभी जाये या न जाये।  
मगर "भास्कर" हमेशा जो पराई पीर हरता है।



कु० संजुला एम० ए०  
सुपुत्री श्री प० विशुद्धानन्द जी  
व्याकरणाचार्य बदायूं

आपने वेदभाष्य लेखन में प० विहारी लाल शास्त्री  
को अनवरत सहयोग दिया—आशीर्वाद—संपादक

## महर्षि दयानन्द का स्वांग

निकालना एक ऐसा अपराध है जिसे कोई भी  
आर्य पुरुष क्षमा नहीं कर सकेगा। और यह अप-  
राध किया है जिला आर्य प्रतिनिधि सभा सहारन-  
पुर ने, १५ मई को अपने शताब्दी महोत्सव के  
जलूस में।

१५ को शाम ५ बजे तप देहराइन से दिल्ली  
लौट रहे थे। सहारनपुर घंटाघर पर एक जलूस  
आर्यसमाज का देखा और उसे देखने की इच्छा से  
हम वहाँ रुक गए।

सुप्रसिद्ध आर्य संन्यासी स्वामी जगदीश्वरा-  
नन्द जी के साथ हम ३० मिनट तक जलूस देखते  
रहे। इस शोभा यात्रा में २ भांकियां, खड़ी करके  
स्वामी दयानन्द की बनायीं गयीं थीं। इन्हें देख  
कर हमारा मन विद्रोह कर उठा और सोचता हूं  
कि ऋषि के स्पष्ट आदेशों का उल्लंघन करने  
वाले हम कैसे आर्य हैं ?

ऋषि ने पूर्व महापुरुषों का स्वांग निकालने  
की कड़ी भर्त्सना की है। अतः हम उन अधि-  
कारियों से, जिन्होंने यह कु-कृत्य किया है कहेंगे  
कि वे इसके लिए प्रायश्चित्त करें, ताकि भविष्य  
में औरों को शिक्षा मिले।—भारतेन्द्र नाथ